जीवन क्रांति के सूत्र

अनुक्रम

1. जीवन क्या है?...2
2. जीवन ऊर्जा के प्रति सजगता..17
3. जीवन ऊर्जा का रूपांतरण..31
4. झूठी प्यासों से मुक्ति..44

जीवन क्रांति के सूत्र
पहला प्रवचन

जीवन क्या है?

मेरे प्रिय आत्मन्!
एक अंधेरी रात छोटा सा गांव और एक फकीर की झोपड़ी के द्वार पर कोई जोर
से दस्तक दे रहा है। आमतौर से आपके घर पर कोई द्वार ठोके तो आप पूछेंगेः कौन है? बुलाने वाला कौन है? लेकिन उस फकीर ने उलटी बात पूछी। उस फकीर ने पूछाः किसको बुला रहे हैं? किसको बुलाया जा रहा है? वह फकीर अपनी झोपड़ी के भीतर है बाहर कोई द्वार ठोकता है। वह फकीर भीतर से पूछता हैः किसको बुला रहे हैं? आमतौर से ऐसा नहीं पूछा जाता, पूछा जाता हैः कौन बुला रहा है। उस बाहर से द्वार पीटने वाले आदमी ने कहाः मैं बायजीद को बुलाता हूं, बायजीद घर में है? और फिर भीतर से वह फकीर जोर से हंसने लगा, हंसता ही चला गया। वह बाहर का आदमी बेचैन हो गया। उसने कहाः हंसने से कुछ भी न होगा, मैं पूछता हूंः बायजीद भीतर है? उस फकीर ने कहाः बायजीद को खोजने निकले हो तो बहुत मुश्किल है, मैं खुद बायजीद को पचास साल से खोज रहा हूं, अभी तक खोज नहीं पाया। ऐसे लोग मुझको ही बायजीद समझते हैं, इसलिए मैं हंसता हूं कि तुम भी किस आदमी को खोजने निकल पड़े हो जो अपने को ही अभी नहीं खोज पाया है? उस आदमी ने शायद समझा होगा कि कोई पागल आदमी है जो बायजीद भी खुद है और कहता है कि मुझे पता नहीं कि मैं कौन हूं।
हम सारे लोग सोचते हैं कि हम जानते हैं कि हम कौन हैं। और इस झूठे ज्ञान की वजह से ही जीवन के सत्य को उपलब्ध नहीं हो पाते, न जीवन के आनंद को, न जीवन का रहस्य पता चल पाता है। एक बुनियादी भूल हो जाती है कि हमने यह मान लिया है कि हम जानते हैं कौन हैं। यह हमने मान ही लिया है कि जीवन क्या है वह हमें पता है। और जिस आदमी को यह भ्रांति हो गई हो कि उसे जीवन का पता है, तो वह जीवन को जानने से सदा के लिए वंचित रह जाए तो कोई आश्चर्य नहीं। पहली बात, जो हमें पता नहीं है, पता होना चाहिए कि हमें पता नहीं है।
जो हमें नहीं मालूम है, उसे जान लेना कि मालूम है, बहुत बड़ी भ्रांतियों के रास्तों पर भटक जाने का द्वार है। जीवन क्या है, यह भी पता नहीं है, तो जीवन में क्रांति कैसे हो सकती है!
और हमें चूंकि यह ख्याल बैठ गया है कि हमें पता है जीवन क्या है, इसलिए चारों ओर जीवन हजार-हजार इशारे करता है, उन इशारों को भी हम नहीं देखते। हजार खबरें भेजता है, उन खबरों को भी नहीं सुनते। हजार रूपों में प्रकट होता है, हमारी आंखें अंधी रह जाती हैं। हजार स्वर में गीत गाता है, हमारे कान नहीं सुन पाते। हजार-हजार रूपों में आता है, हमारी बांहें आलिंगन नहीं कर पातीं, क्योंकि हमें यह पता है कि हमें पता ही है, इसलिए जानने के लिए न हम आंख उठाते हैं, न हाथ फैलाते हैं, न कानों से सुनते हैं, न प्राणों को उस दिशा में लगाते हैं, जहां जीवन जाना जा सकता है।
और भी आश्चर्य की बात है कि हम जीवन को बिल्कुल नहीं जानते, फिर भी जीवन की हजार भांति निंदा करते हैं। जीवन को हजार गालियां देते हैं। जीवन की हजार भूलें खोजते हैं। जीवन में हजार कांटे खोज लेते हैं। जिन्हें जीवन के एक भी फूल का पता नहीं है, वे कांटों का ढेर लगा लेते हैं। और जिन्हें रोशनी की एक किरण नहीं मिली, वे अंधकार को इकट्ठा करते चले जाते हैं। ऐसे हम लोग हैं, हमारे जीवन में कैसे क्रांति हो सकती है!
एक छोटी सी कहानी से मैं इन सूत्रों की चर्चा को शुरू करना चाहता हूं। मैंने सुना है, एक सम्राट अपने पड़ोसी राज्य के हिस्से से गुजरता था। कभी नहीं आया था उस मार्ग पर, दुर्गम पहाड़ियां थीं और उन दुर्गम पहाड़ियों में बहुत गहरे, घनी खोह में बसे हुए लोग थे। पता था कि वह उसके राज्य की सीमा है, लेकिन कभी वहां गया नहीं। उस राज्य से गुजरा तो हैरान रह गया। उस पहाड़ के रहने वालों को मकान बनाने का पता ही नहीं था। वे वृक्षों के नीचे ही सोते थे और वर्षा होती थी, तो चट्टानों के नीचे छिप जाते थे। उन्हें मकान बनाने की कला का कोई बोध ही नहीं था। उन्होंने मकान देखे भी नहीं थे। वे कभी मैदानों में उतर कर न आए थे और मैदानों के लोग कभी वहां न जाते थे।

वह राजा वापस लौटा तो उसने अपने सबसे बड़े शिल्पी को बुलाया, राजभवन बनाने वाले सबसे बड़े कारीगर को बुलाया और उस कारीगर को कहा कि जाओ उस राज्य में एक सुंदर भवन बनाओ, ताकि जो ठहरना चाहें वे ठहर सकें, जिनको जरूरत हो वे मेहमान बन सकें, और वहां के लोग मकान बनाना सीख जाएं, वहां कोई मकान ही नहीं है। वह शिल्पी उस राज्य में गया। बहुत बड़ा महल बनाने के लिए राजा ने आज्ञा दी थी। उतने लोगों को वहां तक ले जाना कठिन था। फिर यह भी उचित था कि वहीं के लोगों से काम करवाया जाए, ताकि वे महल बनाना भी सीख जाएं, और सारा उनका फैलाव पहाड़ों में दूर-दूर तक बसे हुए लोगों तक महल बनाने की खबर भी पहुंच जाए।
उसने जाकर लोगों को इकट्ठा किया और उसने कहा कि मैं सम्राट के द्वारा भेजा गया हूं कि यहां एक महल बनाऊं। वे लोग हंसने लगे, उन्होंने कहाः महल! महल, तो कुछ होता ही नहीं। ये क्या झूठी बातें कह रहे हैं आप! महल क्या होता है? बहुत मुश्किल था उन लोगों को बताना कि मकान क्या होता है, क्योंकि मकान उन्होंने नहीं देखा था।
और वह सारी भीड़ आपस में हंसने लगी और आपस में सोचने लगी, यह आदमी कोई धोखेबाज मालूम होता है, कोई शड्यंत्रकारी मालूम होता है, हम गरीब, सीधे आदमियों को भटकाना चाहता है। मकान कभी देखा है? सुना है? वहां भीड़ उन्हीं लोगों की थी। वह अकेला कारीगर शिल्पी बहुत मुश्किल में पड़ गया। जीवन में उसने बहुत महल बनाए थे, लेकिन उन लोगों को समझाना मुश्किल था कि महल क्या होता है। और वे अपने अज्ञान में इतने ठहरे हुए थे कि उन्होंने यह इनकार कर दिया कि महल हो भी सकता है।
फिर भी उस शिल्पी ने मेहनत की और उसने कहा कि मैं तुम्हें बना कर बताऊंगा। उसने कुछ लोग चुने, सारे लोग ही महल बनाने के लिए खुद मजदूर बनना चाहते थे, क्योंकि बहुत संपत्ति राजा की तरफ से मिलने को थी, लेकिन सभी लोग नहीं चुने जा सके। उतने लोगों की जरूरत भी न थी, और वे उतने कुशल भी न थे, उतने बुद्धिमान भी न थे। जो बुद्धिमान लोग थे और जिनकी संभावना थी कि वे महल बना सकेंगे, उनको शिल्पी ने चुना और महल बनाना शुरू किया।
जो लोग नहीं चुने गए थे, उन्होंने जाकर आस-पास खबर फैलानी शुरू कर दी
कि उसने अपने ही आदमियों को चुन लिया मालूम होता है; और यह महल हम नहीं बनने देंगे। यह महल खतरनाक है! जिस चीज का हमें पता नहीं, उसे हम अपनी भूमि पर बनने दें यह उचित नहीं है। और उन्होंने हजार-हजार तरह की अफवाहें उड़ाईं कि इस महल में जो जाएगा वह मर जाएगा; यह महल जो बनेगा तो हमारा राज्य अभिशाप से भर जाएगा; जो चीज हमने कभी नहीं देखी और हमारे बापदादाओं ने नहीं देखी, उस चीज को न हम देखना चाहते हैं और न बनाना चाहते हैं।
दिन भर शिल्पी महल बनाता था और रात बाकी लोग आते उसकी ईंटें उखाड़ कर फेंक देते थे। वह महल जिनके लिए बनाया जा रहा था, वे ही उस महल को उखाड़ने की दिन-रात कोशिश करते थे। बहुत मुश्किल से उन्हें समझा कर राजी किया जा सका कि पूरा बन जाने दो, फिर तुम्हें पसंद न आए तो तुम गिरा देना।
आधे के करीब महल बन कर तैयार हुआ होगा और तब गांव के आस-पास के लोगों
ने खबर उड़ाई कि यह हमारे लिए नहीं बन रहा है, यह शिल्पी स्वयं अपने लिए बना रहा है, क्योंकि हमने कभी सुना नहीं है कि किसी आदमी ने पहाड़ चढ़ कर किसी दूसरे के लिए कोई सेवा का काम किया हो। कौन किसी दूसरे के लिए कुछ करता है। उस शिल्पी ने बहुत समझाया कि मैं तुम्हारे लिए बना रहा हूं। लेकिन कोई भी मानने को तैयार नहीं हुआ। कौन किसके लिए पहाड़ पर आकर मेहनत करता है। यह शिल्पी अपने लिए ही बना रहा है।
जो लोग उसके साथ काम किए थे, उसने उन लोगों को भेजा कि तुम समझाओ उन्हें, उनकी भाषा में। उन्होंने जाकर समझाया, लेकिन उन लोगों ने कहा कि सब उस शिल्पी के नौकर हैं, उसके जासूस हैं, उसका भोजन खाते हैं और उसकी बजाते हैं, इनकी बात हम नहीं सुन सकते। शिल्पी को स्वयं भेजो, वह हमें समझाने आए। शिल्पी खुद समझाने गया। जो समय लगाना जरूरी था महल के बनाने में, वह उन लोगों को समझाने में लग रहा था, जिनके लिए महल बनाया जा रहा था। वह हजार काम छोड़ कर लोगों को समझाने गया। उन लोगों ने कहाः अब तुम समझाने आए हो? जब हमने दोषारोपण किया, तब तुम उत्तर देने आए हो? उत्तर पहले दिया जाना चाहिए था! उस शिल्पी ने कहाः पहले मैं उत्तर कैसे देता, तुमने पूछा

इसलिए मैं कहने आया हूं। उन लोगों ने कहाः हमें तुम बुद्धू मत समझो। इतना हम काफष्ी समझते हैं कि कोई आदमी पहाड़ पर चढ़कर हमारे लिए मेहनत करने नहीं आएगा। इसके पीछे कोई शड्यन्त्रा है। हम मुसीबत में पड़ जाएंगे। हम यह महल नहीं चाहते।
उसने बहुत समझाने की कोशिश की। उन लोगों ने कहाः तर्क से समझाना व्यर्थ है। इतनी बुद्धि हमारे पास है, हम भटकने को राजी नहीं। लेकिन उस भीड़ में किसी एक समझदार आदमी ने कहा कि अगर आदमी कहता है कि सम्राट ने भेजा है महल बनाने को तो इसके पास कुछ प्रमाण-पत्र होना चाहिए। उन सारे लोगों ने कहाः अगर प्रमाण-पत्र हो तो हमें दिखा दो। वह आदमी, वह शिल्पी प्रमाण-पत्र लेकर आया। लेकिन उस पूरे राज्य में कोई पढ़ना-लिखना नहीं जानता था। वे सारे लोग कहने लगे, हमें बुद्धू बनाने की कोशिश करते हो। इस कागज पर सिर्फ काली लकीरें खींची हुई हैं और कुछ भी नहीं। प्रमाण-पत्र कहां है? उस शिल्पी ने कहाः यह प्रमाण-पत्र है। सम्राट के हस्ताक्षर हैं। लेकिन वहां कोई पढ़ने वाला नहीं था, तब बड़ी मुश्किल हो गई।
और वे लोग यह कहने लगे कि हमें धोखा दिया जा रहा है। इसमें तो कुछ भी नहीं लिखा हुआ है, इसमें तो कोई प्रमाण-पत्र नहीं है। कागज है और काली लकीरें हैं। जो पढ़ना नहीं जानते हों, उनके लिए लिखा हुआ काली लकीरों सा कुछ भी नहीं होता है, उससे ज्यादा नहीं होता। बामुश्किल उस भीड़ में एक आदमी बाहर आया और उसने कहाः मैं पढ़ना जानता हूं। लेकिन शिल्पी को एक तरफ ले जाकर उसने कहा कि मैं इतने हजार रुपये चाहूंगा, तो मैं पढ़ कर बता सकता हूं। शिल्पी ने कहा कि प्रमाण-पत्र सही है, उसके लिए मैं रिश्वत देने को राजी नहीं हूं। उस आदमी ने जाकर भीड़ में अफवाह उड़ा दी कि उस कागज में कुछ भी लिखा हुआ नहीं है। वह बिल्कुल धोखाधड़ी है और वह शिल्पी धोखा देने की कोशिश कर रहा है। लोग कहने लगे कि हम तुमसे पूछने आए हैं कि तुम क्या बना रहे हो, किसलिए बना रहे हो और तुम हमें पढ़ने-लिखने की बातों में भटकाना चाहते हो। वह महल नहीं बन सका। उस राज्य के लोगों ने एक-एक ईंट उखाड़ कर फेंक दी; और उस शिल्पी को वापस लौट आना पड़ा।
यह कहानी मैंने सुनी और यह कहानी इस जिंदगी के बाबत बहुत सही मालूम पड़ती है, जो हम जीते हैं। हम करीब-करीब ऐसी जिंदगी जीते हैं। जिसे बनाने की कोई कला हमें मालूम नहीं। पहली बात जिंदगी क्या है, यही हमें मालूम नहीं। मकान क्या है यही मालूम न हो, तो मकान को बनाने की कला बहुत मुश्किल है और अगर कोई कभी आए और जिंदगी को जान कर आकर कहे कि जिंदगी ऐसी है, तो हम मानने को राजी नहीं होते, क्योंकि हम जो जानते हैं, हम उसे पूरी तरह जानते हैं। हम उससे भिन्न जानने को जरा भी राजी नहीं।
इसलिए जीसस जैसे आदमी को सूली पर लटका दिया जाता है। मंसूर जैसे आदमी
के हाथ-पैर काट दिए जाते हैं। सुकरात जैसे आदमी को जहर पिला दिया जाता है। ये वे लोग हैं, जो जिंदगी के महल की खबर लाते हैं। और हम क्रोध से भर जाते हैं, क्योंकि हमने न ऐसे जीवन के बाबत में सुना है, न देखा और न हम मानने को राजी हैं। वे प्रमाण-पत्र भी लाते हैं अपने साथ, लेकिन उन प्रमाण-पत्रों में हमें सिवाय कागजों के, लकीरों के कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता है और हम कहते हैं कि हम चाहते हैं प्रमाण-पत्र और तुम हमें कागज और लकीरें दिखलाते हो। तुम पढ़ने-लिखने की बात करते हो! तुम सोचने-समझने की बात करते हो! हम सीधे प्रमाण चाहते हैं और जो भाषा हम नहीं जानते, उसे हम कैसे पढ़ें? और जिस जीवन के द्वार पर हमने कभी दस्तक नहीं दी है और कभी झांक कर नहीं देखा, उसे हम कैसे पहचानें?
उस शिल्पी ने उस गांव के लोगों के बीच जैसा अनुभव किया होगा, जीवन के शिल्पी हमारे बीच सदा ऐसा ही अनुभव करते हैं। इसलिए पहला सूत्र आपसे मैं यह कहना चाहता हूंः जीवन क्या है, यह हमें ज्ञात नहीं है। अगर इतना हमें अनुभव हो जाए, तो हम जीवन को जानने की यात्रा पर निकल सकते हैं। जीवन क्या है? इसका हमें कोई पता नहीं है। यह हमें अनुभव हो जाए, तो हम जहां जड़ होकर बैठ गए हैं, वहां से हिलना हो सकता है और नई यात्रा शुरू हो सकती है। अगर हम यह मानने को राजी हो जाएं कि जो हम जानते हैं उतना ही जानने को नहीं है, जानने को बहुत-कुछ बाकी है और शेष है। अगर हम यह मानने को राजी हो जाएं कि जो हमें दिखाई पड़ता है, वही पर्याप्त नहीं है, बहुत-कुछ अनदिखा रह जाता है,

बहुत-कुछ अनसुना रह जाता है, बहुत-कुछ अस्पर्शित रह जाता है। अगर हमें यह ख्याल आ जाए कि हमारे चारों तरफ जितने से हम परिचित हैं, उससे बहुत ज्यादा अपरिचित सदा रह जाता है, तो शायद हम अपरिचित को जानने की दिशा में आंखें उठाएं, कदम बढ़ाएं, हाथ फैलाएं कुछ श्रम करें, कुछ मेहनत करें, कोई नाव बनाएं, कोई मकान बनाएं, उस तरफ जाने का कोई रास्ता, कोई प्रयत्न, कोई साधना शुरू हो।
जीवन की क्रांति एक साधना है। जीवन को जानना जन्म ले लेने से पूरा नहीं हो जाता। कोई आदमी पैदा हो गया, इसलिए जीवन को नहीं जान लेता है। जन्म तो बीज की भांति है। अगर बीज को हम बगीचे में बोएं, तो वह कभी फूल बन सकता है। बीज के भीतर फूल छिपा है, लेकिन बीज खुद फूल नहीं है। और अगर बीज यह समझ ले कि मैं फूल हूं, तो बात खत्म हो गई। फिर बीज, बीज ही रह जाएगा, सड़ेगा, नष्ट हो जाएगा, लेकिन कभी फूल नहीं बन सकेगा। बीज को जानना पड़ेगा कि वह कुछ होने की यात्रा है, कोई संभावना, कोई पॉसिबिलिटी, कोई पोटेंशियलिटी। वह अभी है नहीं, हो सकता है।
आदमी हो सकता है कुछ, आदमी है नहीं। हम कुछ हो सकते हैं, हम कुछ हैं नहीं। हम सिर्फ होने की एक संभावना मात्र हैं। हम एक बीज हैं, जो टूट जाए तो फूल खिल सकते हैं और न टूटे तो सड़ सकता है, नष्ट हो सकता है, दुर्गंध फैल सकती है। जिस बीज के फूल बन जाने से सुगंध फैलेगी, आकाश में नृत्य होगा रंगों का। वही अगर फूल न बन पाए, बीज ही रह जाए, तो सिर्फ दुर्गंध फैलेगी; न कोई नृत्य होगा, न कोई सुगंध होगी, सिर्फ दुर्गंध फैलेगी। सड़ेगा बीज, नष्ट होगा और मरेगा। हम मरते हैं, नष्ट होते हैं। लेकिन न तो हम जीवित हैं और न हम जीवन को उपलब्ध होते हैं।
हम उन बीजों की तरह हैं, जो पागल हो गए हैं और समझते हैं कि हम फूल हो
गए हैं। मनुष्य को जानना पड़ेगा कि वह सिर्फ बीज है। एक संभावना है। कुछ हो सकता है, लेकिन हो नहीं गया है। यह मैं पहला सूत्र कहना चाहता हूं आपसे। हम हैं कुछ होने के लिए। जैसे कोई तीर किसी प्रत्यंचा पर चढ़ा हो, कोई तीर किसी धनुषबाण पर चढ़ा हो; और किसी धनुष पर चढ़ा हुआ तीर सिर्फ संभावना है। वह जा सकता है वहां, जहां अभी गया नहीं है; वह पहुंच सकता है उन लक्ष्यों पर, जो बहुत दूर हैं, लेकिन अभी वह धनुष पर चढ़ा है, अभी कहीं गया नहीं।
आदमी धनुष पर चढ़ा हुआ तीर है। चल जाए तो परमात्मा तक पहुंच सकता है, रुक जाए तो धनुष पर ही रह जाता है। हम शरीर पर चढ़ी हुई आत्माएं हैं। चल जाएं तो परमात्मा तक पहुंच सकते हैं, रुक जाएं तो कब्र के अतिरिक्त और कहीं नहीं पहुंचते, कहीं नहीं पहुंच सकते। लेकिन जन्म को ही हमने सब-कुछ समझ लिया है।
एक आदमी पैदा हो जाता है और मान लेता है कि बस बात पूरी हो गई। अब जीना है। जो जीवन मिला ही नहीं, उसे जीएंगे कैसे? सिर्फ जन्म मिला है, जन्म जीवन नहीं है। जन्म केवल मौका है, चाहें तो जीवन मिल सकता है, चाहें तो नहीं भी मिल सकता है। लेकिन चारों तरफ सारे लोग मानते हैं कि यही जीवन है, बच्चा पैदा हो गया, बड़ा हो गया, शिक्षित हो गया, नौकरी कर रहा है, मकान बना रहा है, धन कमा रहा है और जीवन मिल गया। यह जीवन है? फिर मकान बनाते, धन कमाते, नये बच्चों को पैदा करते, यह आदमी एक दिन मर जाता है। यह जन्म से लेकर मरने तक की पूरी यात्रा हो जाती है।
जीवन का रस कहां मिलता है, जीवन की सुगंध कहां मिलती है, जीवन का संगीत कहां सुनाई पड़ता है। जैसे कोई आदमी वीणा को कंधे पर रखे हुए जीवन भर घूमता रहे और कहे कि मेरे पास संगीत है। वह झूठ नहीं कहता, लेकिन झूठ कहता है। एक अर्थ में वह सही कहता है, क्योंकि वीणा उसके पास है, जिससे संगीत पैदा हो सकता है। लेकिन वीणा ही संगीत नहीं है। और एक आदमी जिंदगी भर वीणा को रखे घूमता रहे, तो भी संगीत अपने आप पैदा नहीं हो जाएगा। वीणा स्वयं संगीत नहीं है। वीणा से संगीत पैदा हो सकता है। जन्म स्वयं जीवन नहीं है। जन्म से जीवन पैदा हो सकता है और कोई चाहे तो जन्म की वीणा को कंधे पर रखे हुए मृत्यु के दरवाजे तक पहुंच जाए, उसे जीवन नहीं मिल जाएगा।
जन्म तो मिलता है मां-बाप से, जीवन कमाना पड़ता है स्वयं। जन्म मिलता
है दूसरों से, जीवन पाना पड़ता है खुद। जन्म मिलता है, जीवन खोजना पड़ता है। जीवन की खोज एक कला है और जन्म ले लेना बिल्कुल ही प्राकृतिक घटना है,

जिसका कोई बहुत बड़ा मूल्य नहीं है। इतना ही मूल्य है कि उसके बाद जीवन मिल सकता है। लेकिन करोड़ों-करोड़ों में कभी कोई एक आदमी इस जीवन को उपलब्ध होता है।
हम सब मरे हुए ही जीते हैं और मरे हुए ही मर जाते हैं। हम सिर्फ जन्मते हैं और मर जाते हैं। जन्म और मृत्यु के बीच जो लंबा फासला है, हम सोचते हैं, वही जीवन है। धन जरूर हम इकट्ठा करते हैं, ज्ञान भी इकट्ठा करते हैं, पद-प्रतिष्ठा भी इकट्ठी करते हैं और फिर शायद सोचते हैं, यह जो इकट्ठा कर लिया है, यही जीवन है। कितना ही धन इकट्ठा हो जाए जीवन का धन से क्या संबंध? और कितने ही शास्त्रों का ज्ञान जान लिया जाए और कितना ही बड़ा कोई पंडित हो जाए, जीवन को जानने से पांडित्य का क्या संबंध? और अगर चाहे कोई सारे जगत को जीत ले, सारी पृथ्वी का सम्राट हो जाए और चाहे कोई चांद-तारों पर जाकर झंडे गाड़ दे। लेकिन इन सबसे जीवन का क्या संबंध?
मैंने एक रूसी लोककथा सुनी है। मैंने सुना है कि एक कवि एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ है। सुबह सूरज निकला है और वह कवि उस वृक्ष के नीचे बैठ कर अपनी कविताएं पढ़ रहा है। वहां कोई भी नहीं है। सिर्फ वृक्ष पर एक कौआ बैठा हुआ है। वह कवि अपनी पहली कविता पढ़ता है और कहता है कि मैंने सारी दुनिया के धन को पा लिया, मैं सोलोमन का खजाना पा लिया हूं, मैं कुबेर हो गया हूं। मेरे पास सब-कुछ है। जो भी पाया जा सकता है, वह मैंने पा लिया।
और वह बहुत गौर से चारों तरफ देखता है। वहां तो कोई भी नहीं है, सिर्फ ऊपर कौआ बैठा हुआ है। वह कौआ जोर से हंसता है और कहता हैः सो वॉट? इससे क्या हुआ? उस कवि ने बहुत घबड़ा कर देखा, वहां कोई भी नहीं है। एक कौआ ऊपर बैठा हुआ है। उसने कहाः क्या यह कौआ बोल रहा है--सो वॉट? मैंने बड़े-बड़े मनुष्यों के सामने अपनी कविताएं पढ़ी हैं और लोगों ने प्रशंसा की है और तू एक मूरख कौआ कहता है--सो वॉट? इससे क्या हुआ? वह कौआ कहता हैः निश्चित ही मैं कहता हूं, क्योंकि जहां तक हम समझते हैं धन की मूढ़ता मनुष्यों को छोड़ कर न किसी पशु को है, न किसी पक्षी को है, न किसी पौधे को है। तो अगर तुम मनुष्यों के बीच में यह कविता पढ़ोगे कि मैंने सोलोमन का खजाना पा लिया है, तो लोग ताली बजाएंगे, क्योंकि वे भी सोलोमन का खजाना भीतर से पाना चाहते हैं, वे उतने ही नासमझ हैं, जितने नासमझ तुम हो। उनकी नासमझी कविता नहीं बन पाती, तुम्हारी नासमझी कविता बन गई है। इसके अतिरिक्त और कोई फर्क नहीं। वह कौआ कहता हैः लेकिन पा लिया तुमने सारा ख.जाना, फिर क्या होगा? इससे क्या होता है? उस कवि ने कहाः नासमझ कौए तू समझेगा नहीं। मैं दूसरी कविता सुनाता हूं। लेकिन वह आदमी तो वही है, कविताएं कितनी भी करे, उसका मन वही है, उसका लोभ वही है। दूसरी कविता में वह कहता हैः मैंने सारी पृथ्वी जीत ली, मैं चक्रवर्ती सम्राट हो गया हूं। मुझसे ऊपर अब कोई भी नहीं है, सब मेरे पैरों के नीचे।
वह कौआ फिर हंसता है, कहता हैः सो वॉट? इससे क्या होगा? माना कि सारे लोग तुम्हारे नीचे आ गए, तुम्हारे पैरों के नीचे और तुम सबके मालिक हो गए, लेकिन इससे होगा क्या, इससे तुम पा क्या लोगे? उस कवि ने क्रोध में तीसरी कविता पढ़ी। उसने कहाः छोड़ो इसे भी, मैंने सारे शास्त्र पढ़ लिए हैं, मैंने गीता, कष्ुरान, उपनिषद, बाइबिल सब पढ़ लिए हैं। जितना भी ज्ञान है मैंने जान लिया है, मुझसे बड़ा कोई ज्ञानी नहीं है। मैं सर्वज्ञ हो गया हूं। मैं सब-कुछ जानता हूं।
उस कौए ने कहाः सो वॉट? इससे क्या होगा? तुमने सब जान लिया, तो भी क्या होगा। एक चीज फिर भी अनजानी रह गई, तुमने सब धन पा लिया, लेकिन एक धन बिना पाया रह गया। तुमने सारा साम्राज्य पा लिया, लेकिन एक राज्य अपरिचित रह गया। वह कौआ अपनी बातें कहता जाता है, कवि क्रोध से कविताएं फेंक कर चल पड़ता है।
उस कौए से किसी दूसरे कौए ने पूछाः तू हर बात में कहता गया--सो वॉट? इससे क्या होगा? कविता कौन सी पढ़ी जाती कि तू दाद देता? उस कौए ने कहाः एक ही कविता है जीवन की और वह जीवन को जानने की। न तो धन को जानने से कविता पैदा होती है और न यश को जानने से और न पांडित्य को जानने से। एक ही कविता है जीवन की, वह जीवन को जानने से पैदा होती है। और उस कवि को उस कविता का

कोई पता नहीं है। जब तक वह, वह कविता न गाता तब तक मैं कहता ही चला जाता--सो वॉट?
आपसे मैं कहना चाहूंगा कि जब आपका मन कहे कि सारा धन इकट्ठा कर लो, तो अपने से पूछना--सो वॉट? क्या होगा इससे? और जब मन कहे कि सारी दुनिया जीत लो, राज-सिंहासनों पर पहुंच जाओ तो अपने मन से पूछना--सो वॉट? इससे क्या होगा? और जब मन इस तरह की दौड़ों की बातें करें, जिनकी बातें मन रोज करता है, तो निरंतर अपने से पूछना, इससे क्या होगा?
जब तक मैं स्वयं को नहीं जानता और जीवन के स्वर को नहीं जानता, मेरा सारा जानना, सारा पाना, क्या अर्थ रखता है? यह प्रश्न उठ जाए तो आदमी की दुनिया में धर्म की शुरुआत हो जाती है। उस आदमी को मैं धार्मिक नहीं कहता, जो पूछता है ईश्वर है या नहीं। धार्मिक आदमी को ईश्वर से कोई भी प्रयोजन नहीं है। उस आदमी को मैं धार्मिक नहीं कहता, जो कहता है सृष्टि किसने बनाई। सृष्टि के बनाने के, न बनाने के प्रश्न वैज्ञानिक पूछ सकते हैं। धार्मिक आदमी को दो कौड़ी का मतलब नहीं है कि किसने बनाई। मैं उस आदमी को धार्मिक नहीं कहता, जो कहता है कितने नरक हैं, कितने स्वर्ग।
स्वर्ग और नरक से धार्मिक आदमी को क्या प्रयोजन! नरक की चिंता वे करते हैं, जो ऐसे काम कर रहे हों कि नरक जाना पड़े या स्वर्ग की चिंता ऐसे लोग करते हैं, जो नरक जाने के काम कर रहे हैं, लेकिन स्वर्ग का पता चल जाए, तो कुछ रिश्वत देकर स्वर्ग में भी प्रवेश पा सकें। लेकिन धार्मिक आदमी को स्वर्ग-नरक से क्या प्रयोजन। धार्मिक आदमी का एक ही प्रश्न है, एक ही जिज्ञासा है, उसका एक ही अल्टीमेट कनसर्न, जिसको कहें कि उसका जो आखिरी लगाव है, वह एक है, इस बात को जान लेने का कि मैं हूं, लेकिन मैं क्यों हूं? मेरा अस्तित्व है, लेकिन मेरा अस्तित्व क्यों है? अगर मैं न होता तो क्या हर्ज था? और अगर मैं हूं, तो प्रयोजन क्या है? क्या मैं अपने इस होने को क्षुद्रतम में खोता चला जाऊं? रोज सुबह उठूं और वही करूं चालीस-पचास वर्षों तक? रोज दफ्तर, रोज दुकान, रोज मकान, रोज सोना, रोज खाना? क्या मैं पचास वर्षों तक कोल्हू के बैल की तरह यही करता रहूं या यह भी पूछूं कि मैं क्यों हूं? किसलिए हूं? क्या प्रयोजन है मेरे होने का?
धार्मिक आदमी यह जानना चाहता है कि मैं क्यों हूं आखिर? आखिर मेरे होने की जरूरत क्या है? और जैसे ही कोई आदमी यह प्रश्न पूछेगा कि मेरी जरूरत क्या है, वैसे ही वह पूछना शुरू करेगा कि मैं यह भी तो जान लूं कि मैं कौन हूं, क्या हूं, कहां से हूं, क्यों हूं और इस सारी बात की खोज की तरफ अगर ध्यान चला जाए, तो जीवन को जाना जा सकता है। लेकिन हम तो जीवन वहां खोज रहे हैं, जहां जीवन नहीं है। हम तो वहां खोज रहे हैं, जहां जीवन का कोई संबंध नहीं है। हम वहां खोजते रहें, खोजते रहें, हम खोजते-खोजते खुद मिट जाएंगे, पर जीवन का हमें कोई पता नहीं पड़ पाएगा।
मरते हुए आदमी से पूछो, वह भी यही कर रहा था, जो आप कर रहे हैं। लेकिन उसके पहले भी मरने वाले लोगों से उसने यह नहीं पूछा था। हर आदमी मर रहा है और हर आदमी वही कर रहा है, जो दूसरे मरने वाले ने किया है। और कोई भी यह नहीं पूछ रहा कि हम यह क्या कर रहे हैं?
एक रात एक महल के ऊपर सम्राट सोया है, सो नहीं पा रहा है, नींद नहीं लग रही है। किस सम्राट को नींद लगती है! सम्राट को नींद लगना बहुत मुश्किल है। जो बहुत लोगों की नींद छीन लेते हैं, उनकी खुद की नींद कैसे लग सकती है। वह करवटें बदल रहा है। सम्राट हमेशा ही करवटें बदलते हैं। और सम्राटों को करवट बदलने में सुविधा रहे, इसलिए बहुत अच्छे गद्दे-तकियों का इंतजाम करना पड़ता है। सोने वाला बहुत गद्दे-तकियों की फिकर नहीं करता। जिसे नींद आती है, उसके लिए जमीन भी बहुत बहुमूल्य गद्दी हो जाती है और जिसे नींद नहीं आती उसे गद्दियां भी कांटें ही मालूम पड़ती रहती हैं।
वह करवटें बदल रहा है, आधी रात बीत गई, तब उसे ख्याल आता है कि कोई ऊपर छप्पर पर चल रहा है। वह पूछता हैः कौन है ऊपर? वह घबड़ा गया है। सम्राटों के पास बंदूकें हैं, तलवारें हैं, पहरे हैं। असल में पहरे उन्हीं के पास हैं, जो भीतर बहुत डरे हुए हैं। जो भीतर डरा हुआ न हो, उसके आस-पास पहरे की कोई भी जरूरत नहीं। सिर्फ डरे हुए आदमी के आस-पास बंदूकें के पहरे होते हैं; वह एकदम डर गया। कौन है ऊपर? उसने चिल्ला कर पूछा। ऊपर से किसी ने कहाः

घबड़ाइए मत, परेशान मत होइए, आपसे मुझे कोई मतलब नहीं, मेरा ऊंट खो गया है।
मैं अपने ऊंट को खोज रहा हूं। उस सम्राट ने कहाः कोई पागल आदमी मालूम पड़ते हो, महलों की छतों पर ऊंट खोया करते हैं, छप्परों पर, खप्पड़ों पर ऊंट खोते हैं।
सम्राट ने पहरेदार को उठाया और कहा कि देखो कौन है ऊपर, पकड़ो उसे।
लेकिन वह आदमी न मालूम कहां चला गया।
लेकिन सम्राट रात भर सोचता रहा, इसका मतलब क्या है कोई आदमी छप्पर पर ऊंट खोजता है! वैसे ही नींद नहीं आई, रात भर सोचता रहा, सुबह-सुबह झपकी लगी, तो उसे सपना दिखाई पड़ा कि सपने में वह आदमी फिर छप्पर पर ऊंट खोज रहा है। वह उससे पूछता है कि क्या ऊंट छप्परों पर खोजे जाते हैं? ऊंट छप्परों पर खोते ही नहीं हैं। तो वह आदमी उससे सपने में कहता है। और तुम वहां जीवन खोज रहे हो, जहां जीवन खोया ही नहीं। अगर जीवन मिल सकता है धन में, यश में, पद में, प्रतिष्ठा में, तो ऊंट भी छप्परों पर मिल सकते हैं। ऊंट तो छप्परों पर खो भी सकते हैं, लेकिन जीवन, जीवन न तो धन में खोया है, न पद में, न बाहर के सामान में, न मकानों में, जीवन तो वहां है जहां तुम... वह घबड़ा कर जाग गया। सुबह वह अपने दरबार में बैठा है, चिन्तित है और तभी एक आदमी दरबार में घुसता हुआ भीतर चला आया। द्वारपाल ने रोकने की कोशिश की, लेकिन वह नहीं रुका। द्वारपाल ने उससे पूछा भीः कहां जाते हो! उस आदमी ने कहा कि मैं इस धर्मशाला में थोड़े दिन के लिए मेहमान होना चाहता हूं। मैं इस सराय में रुकना चाहता हूं। उस द्वारपाल ने कहाः पागल हो गए हो! मालूम होता है इस बस्ती में पागल छूट गए हैं। रात एक पागल मकान के ऊपर चढ़ा हुआ था और जो कहता था कि ऊंट खो गया है, एक तुम पागल हो कि राजा के महल को सराय कह रहे हो, धर्मशाला कह रहे हो। यह सराय नहीं है, सम्राट का निवास स्थान है। उसने कहा कि तुमसे बात नहीं करूंगा। सम्राट से ही बात करूंगा।
वह भीतर गया। दरबार में उसने जाकर सम्राट से कहा कि मैं इस सराय में कुछ दिन मेहमान होना चाहता हूं। आपको कोई एतराज तो नहीं? तो सम्राट ने कहा कि बड़ी मुश्किल की बातें हैं। यह मेरा निवास स्थान है, सराय नहीं। लेकिन वह अजनबी आदमी कहने लगाः निवास स्थान! कुछ वर्षों पहले मैं आया था, तब यहां मैंने इसी सिंहासन पर दूसरे आदमी को बैठे देखा था। सम्राट ने कहा कि वह मेरे पिता थे। उनका देहावसान हो गया है। उस अजनबी आदमी ने कहाः मैं उनके पहले भी आया था, तब मैंने तीसरे ही आदमी को बैठे देखा था। सम्राट ने कहाः वे मेरे पिता के पिता थे, वे भी चल बसे। वह आदमी हंसने लगा, उसने कहा कि जहां मेरे देखते-देखते रहने वाले बदल जाते हैं, उसको निवास स्थान कहना उचित होगा? तुम कितने दिन तक यहां रहोगे? जहां तक मैं समझता हूं, जब मैं दोबारा आऊंगा, चौथा आदमी मिलेगा और वह कहेगा पिता जी थे वह, जो पहले बैठे थे, उनका देहावसान हो गया। इसलिए मैं इसे सराय कहता हूं और कुछ दिन यहां ठहर जाना चाहता हूं, तुम्हें कोई एतराज तो नहीं है।
उस सम्राट को एकदम ख्याल आया कि यह आदमी वही होना चाहिए, जो रात को ऊंट खोज रहा था। उस सम्राट ने उतर कर उसके पैर पकड़ लिए। उस आदमी ने कहाः मेरे पैर मत पकड़ो, अपने ही पैर पकड़ लो, क्योंकि तुम्हारे पैर तुम्हें वहां ले जा रहे हैं, जहां तुम्हें जाना नहीं है। तुम्हारे पैर तुम्हें वहां पहुंचा रहे हैं, जहां पहुंचने को कुछ नहीं है। तुम्हारे पैर तुम्हें उस यात्रा पर गतिमान किए हुए हैं, जो शून्य में समाप्त होती है। अपने ही पैर पकड़ो और उस तरफ चलो, जहां जीवन है, जहां सत्य है।
वह आदमी, वह सम्राट उसी दिन उस महल को छोड़ कर चला गया। उसके घर के लोग कहने लगेः महल को छोड़ कर आप कहां जा रहे हैं? उसने कहाः महल होता तो मैं छोड़ कर न जाता, यह सराय है, जिसे छोड़ ही देना पड़ेगा। उसे पकड़ कर रखने में परेशानी ही होने को है और कुछ भी नहीं।
लेकिन हम जिंदगी में सराय को घर समझे हुए हैं। कौड़ियों को धन समझे हुए हैं। आस-पास की भीड़ को मित्र-परिवार समझे हुए हैं। और एक चीज जिसे समझने से कुछ हो सकता था, उसको भर अंधेरे में डाले हुए हैं स्वयं के होने को अंधेरे में डाले हुए हैं। कोई अगर आपकी छाती पर आकर द्वार खटखटाए और पूछे कौन है भीतर, तो जैसा बायजीद ने कहा था खोज रहा हूं पचास साल से, मुझे पता नहीं चला; ऐसा आप कह सकेंगे कि खोज रहा हूं, पता नहीं चला है। खोजा ही नहीं है!

खोजा ही नहीं है! खोजें और पता न चले, तो भी एक बात है; लेकिन खोजा ही न हो, तब तो किसी दूसरे को उत्तरदायी भी नहीं ठहराया जा सकता।
जीवन क्रांति की दिशा में पहला सवाल है मैं क्यों हूं? यह अस्तित्व क्यों है? हम किसलिए श्वास ले रहे हैं? किसलिए सुबह उठते हैं? किसलिए रात को सो जाते हैं? जीवन एक प्रश्न बनना जरूरी है, जीवन एक इंक्वायरी बननी जरूरी है, जीवन एक जिज्ञासा और खोज बननी जरूरी है। लेकिन हम तो दूसरों की मान लेते हैं। खुद तो खोजते नहीं, दूसरे कह देते हैं यही जीवन है। बाप बेटे से कह देता है यही जीवन है और बेटा मान लेता है। गुरु विद्यार्थियों से कह देते हैं, यही जीवन है। नेता अनुयायियों को कह देते हैं, यही जीवन है। जाने वाले आने वालों को कहते चले जाते है, यही जीवन है और हम सब मानते चले जाते हैं।
जो इस तरह मानता चला जाता है, वह आदमी तो अपने को आदमी कहलाने का हकदार
भी नहीं है। उसने अपनी तरफ से प्रश्न भी नहीं पूछा, उसने यह भी नहीं पूछा यह जीवन है? और अगर यह जीवन नहीं है, तो फिर जीवन क्या है? हम तो, जैसे मालूम होता है, जीवन के संबंध में भी लोकतंत्र का उपयोग कर रहे हैं। वोट लेकर पता लगा लेते हैं कि जीवन क्या है। जो सारे लोग कहते हैं, वह हम मान लेते हैं।
मैंने सुना है, एक गांव में एक आदमी मर गया, वह मरा नहीं था, बेहोश हो गया था। लेकिन गांव के लोग तो जल्दी में होते हैं। कोई मर जाए, तो जल्दी उसे विदा करना चाहते हैं। जगह खाली हो, एक और आदमी उसकी जगह आ सके। एक राष्ट्रपति मरता है, वह मर भी नहीं पाता, दूसरे की दौड़ शुरू हो जाती है। उसको पहुंचा भी नहीं पाते कि जहां पहुंचाने जाते हैं, वहां चेहरे तो लटके रहते हैं, लेकिन भीतर खोज जारी रहती है कि कौन, कौन बैठ रहा है इसकी जगह। वह आदमी मर गया था, उसको जल्दी से उन्होंने बांधा अरथी पर, और ले चले।
वह आदमी मरा नहीं था, सिफ बेहोश था। गांव के अधिकारियों ने भी प्रमाण-पत्र दे दिया कि वह मर गया है। जिंदा आदमी की कोई तलाश नहीं करता, मरे हुए आदमी की कौन तलाश करता है। प्रमाण-पत्र दे दिया गया कि वह मर गया है।
वे उसे ले गए, जब उसे कष्ब्र में उतारने को नीचे उतारा, तो वह आदमी करवट लेकर उठ कर बैठ गया और कहाः लेकिन मैं जिंदा हूं। गांव के लोगों ने कहाः ऐसा कैसे हो सकता है, हम प्रमाण-पत्र लाए हैं कि तुम मरे हो और अधिकारियों ने दिया हुआ है और हमारा अधिकारी कभी भूल नहीं कर सकता। उस आदमी ने कहाः होगा यह, लेकिन मैं जिंदा हूं। लेकिन उन लोगों ने कहाः हम कैसे मान सकते हैं, ऐसा कभी हुआ नहीं।
उस आदमी ने चारों तरफ नजर दौड़ाई, पचास आदमी उसको विदा करने आए थे। उसमें गांव का एक न्यायाधीश भी था। उसके निष्पक्ष होने का ख्याल था। उसने उस न्यायाधीश से हाथ जोड़े कि आप कृपा करके कुछ निर्णय करें मैं जिंदा हूं। उस न्यायाधीश ने कहाः आप लोगों ने कथित मरे हुए आदमी का वक्तव्य सुना, आप सब लोगों की क्या गवाही है। उन लोगों ने कहाः हम कैसे, अधिकारी के खिलाफ हम कैसे बोल सकते हैं? सारे गांव के सामने प्रमाण-पत्र दिया गया है कि यह आदमी मर गया है। हम मानते हैं कि यह आदमी मर गया है। उस न्यायाधीश ने कहाः तब मैं भी निर्णय देता हूं कि इसे दफना दिया जाए, यह आदमी जिंदा नहीं है। आप क्यों हंसते हैं? वह तो मरने के संबंध में दूसरों से निर्णय लिया था, हमने तो जीवन के संबंध में दूसरों से निर्णय लिया हुआ है। जीवन के संबंध में हम दूसरों की बात माने हुए बैठे हैं। दूसरे कहते हैं यही जीवन है, दौड़ो, धन कमाओ, मकान ऊंचे से ऊंचा बनाते चले जाओ, जमीन से चांद तक की यात्राएं करो और मरो यही जीवन है, दूसरे कहते हैं। हजारों-हजारों साल की गवाही न्यायाधीश कहते हैं, नेता कहते हैं, समझदार लोग कहते हैं, चारों तरफ की भीड़ कहती है। और इस भीड़ के दबाव में हर आदमी मान लेता है यही जीवन है। और मैं आपसे कहना चाहूंगा, यह जीवन बिल्कुल नहीं है। यह मरने से भी ज्यादा बदतर है। इसका जीवन से कोई भी संबंध नहीं है। जीवन कुछ बात ही और है! यह सिर्फ आजीविका है। यह लाइफ नहीं है, सिर्फ लिविंग है। यह सिर्फ रोटी-रोजी कमाना है। और रोजी-रोटी कमाने का उपयोग है, अगर उस जीवन की खोज जारी हो। और अगर उस जीवन की खोज जारी नहीं है, तो रोजी-रोटी को कमाना बिल्कुल फिजूल है, बेमानी है, उसका कोई अर्थ नहीं, कोई प्रयोजन नहीं।

जिस बीज से फूल आने को न हों, उसमें फिर पानी और खाद डालना बेमानी है। खाद और पानी हम इसलिए डालते हैं कि फूल आ सकें। फूलों के लिए खाद और पानी है, लेकिन खाद और पानी हम दिए चले जा रहे हैं और ऐसा लगता है कि जैसे पौधे के जीवन का एक ही लक्ष्य है कि खाद और पानी मिलता चला जाए, न कभी फूल आते हैं, न कभी सुगंध फैलती है, न कभी कोई वीणा बजती है। क्या है यह? कैसा जीवन? एक प्रश्न उठ जाना.जरूरी है क्या यही जीवन है?
बहुत कठिन है प्रश्न पूछना! दूसरों से पूछना तो बहुत सरल है, क्योंकि बंधे-बंधाए उत्तर दूसरों के पास तैयार हैं। खुद से पूछना बहुत मुश्किल है, क्योंकि वहां बंधे-बंधाए उत्तर नहीं हैं। वहां प्रश्न पूछने का मतलब, वहां प्रश्न पूछने का मतलब एक लंबे श्रम और एक साधना और यात्रा से गुजरना है। लेकिन हमने जीवन के सब महत्वपूर्ण प्रश्नों को, जवाबों को बांध कर तह करके रख लिया है। सब हमें सिखा दिया गया है। सब कल्टिवेटिड उत्तर हैं हमारे पास। और जब भी जिंदगी सवाल उठाती है, और हम फौरन उत्तर दे देते हैं। अपना दे देते हैं, दूसरों से दिलवा लेते हैं।
हम भी जो उत्तर देते हैं, वह दूसरों से सीखा हुआ उत्तर ही है। वह भी हमें फीड इन किया गया है, वह भी बचपन से हमारे दिमाग में डाला गया है। अगर कोई आदमी कहता है कि नहीं, यह जीवन नहीं है, शरीर का जीवन जीवन नहीं है। आत्मा का जीवन जीवन है। वह आदमी भी, हो सकता है, किसी किताब में पढ़ कर कह रहा हो, किसी गुरु से सुन कर कह रहा हो। और सौ में निन्यानबे मौके यही हैं कि उसने किसी से सुन कर यह बात कही है। अगर वह सुन कर कह रहा है, तो यह भी बेमानी है। इसमें भी कोई अर्थ नहीं है। कौन जानता है, आत्मा है या नहीं। खुद ही जानना पड़ेगा। दूसरे के उत्तर काम नहीं दे सकते। कौन कह सकता है कि शरीर के साथ सब नहीं मर जाता है। जो जानता है, वही कह सकता है, लेकिन उसके कहे हुए का उपयोग दूसरे के लिए क्या है! दूसरे के लिए तो आकाश में गूंजती हुई आवाज से ज्यादा नहीं है उसकी बात। कोई कहता है कि आत्मा है, मैं कहता हूं कि आत्मा है, लेकिन क्या मतलब है इससे आपका?
कोई भी तो मतलब नहीं है, एक शब्द गूंजता है और खतम हो जाता है, हम शरीर
ही रह जाते हैं। इस शब्द के सुनने से हम आत्मा नहीं हो जाते। हां, यह हो सकता है कि आप इस शब्द को सीख लें और याद कर लें और जब जिंदगी सवाल पूछे, तो आप कहने लगेंः मैं आत्मा हूं, मैं अमर हूं, मैं ब्रह्म हूं, मैं परमात्मा हूं। वह सब झूठी बकवास होगी। यह जानना पड़ेगा।
यह जानना तब होगा, जब यह इंक्वायरी, यह प्रश्न हमारे प्राणों में तीर
की तरह उतर जाए, हमारे रोम-रोम को घेर ले। हमारा कण-कण पूछने लगे कि मैं हूं कौन? मैं किसलिए हूं? हमने कभी नहीं पूछा, अगर प्यास लग आए हमें, तो जितने जोर से हम पूछते हैं पानी कहां है? उतने जोर से भी हमने नहीं पूछा कि जीवन कहां है। अगर भूख लग आए, तो जितना प्राणों में क्रंदन होने लगता है, उतना भी जीवन के लिए हमारे प्राणों में कभी रुदन नहीं उठा।
फिर लोग मेरे पास आते हैं, वे कहते हैं, ईश्वर को खोजना है? उनके मन में इतनी प्यास भी नहीं, जितनी पानी के लिए हो। वे कहते हैं, मोक्ष कहां है और वे ऐसे पूछते हैं कि जैसे कोई उन्हें उठाए और वहां पहुंचा दे। कौन पहुंचाएगा किसको? और ईश्वर कहीं बैठा है, आप जो चले कि मिल जाएगा? या आप किसी मंदिर में हाथ जोड़ लेंगे और नारियल फोड़ देंगे और कोई मंत्र पढ़ लेंगे और वह मिल जाएगा? वह है, तो आपके भीतर है। अगर कुछ भी है सत्य, तो वह आपके साथ है। उसे खोजना पड़ेगा। खोजना बहुत कष्टपूर्ण है, बहुत आरडुअस है। असल में बंधे हुए उत्तर हमेशा आसान हैं, लेकिन बंधे हुए उत्तर आदमी को पागल किए दे रहे हैं। सारी दुनिया एक मैड-हाउस हो गई है, बंधे हुए उत्तरों के कारण।
मैंने सुना है, एक गांव में सम्राट आने को था। गांव के जो खास-खास बड़े लोग थे, उन सबको सम्राट के सामने दरबार में पेश किया जाने को था। गांव में एक फकीर भी था। वह गांव का फकीर भी बहुत प्रसिद्ध था। गांव के लोग उसे पूजते थे। गांव के लोगों ने कहा, हमारा फकीर भी जाएगा और नंबर एक वही खड़ा होगा, हमारे गांव की तरफ से सम्राट से मिलने को। लेकिन सम्राट के काम करने वाले नौकर-चाकरों ने कहा, फकीर कभी सम्राट से मिला नहीं, उसे तौर-तरीका

मालूम नहीं, शिष्टाचार मालूम नहीं, वह कुछ गड़बड़ कर दे, उससे कुछ कह दे, तो फकीर को सब सिखा दिया जाना चाहिए कि वह क्या-क्या उत्तर दे।
गांव के लोगों ने कहाः हम इसके लिए राजी हैं, फकीर भी राजी हो गया। उसने कहाः मुझे पता नहीं दरबार में क्या कहना है, क्या पूछा जाएगा, सब गड़बड़ हो सकता है। राजा के आदमियों ने फकीर को कुछ चार-छह बातें सिखाईं। पहला तो उन्होंने कहा कि सम्राट आपसे पूछेंगेः आपकी उम्र क्या है? वृद्ध फकीर है, आपकी उम्र कितनी है? उसने कहाः मेरी उम्र सत्तर वर्ष। आप ठीक से याद रखना। पहले पूछेंगे, आपकी उम्र कितनी है? फिर आपसे वह पूछेंगेः कितने दिन से आप साधना कर रहे हैं? उसने कहाः मैं तीस वर्ष से साधना कर रहा हूं। ऐसे चार-छह प्रश्न तैयार करवा दिए।
फिर सम्राट आए और सब गड़बड़ हो गई। सम्राट ने पहले पूछा कि आप कितने दिन
से फकीर हो गए हैं? कितने दिन से साधना कर रहे हैं?
उस आदमी ने कहाः सत्तर वर्ष से। क्योंकि उत्तर तो तैयार था।
सम्राट ने कहाः सत्तर वर्ष से! तब तो आपकी उम्र बहुत होगी। आपकी उम्र कितनी है?
उस आदमी ने कहाः तीस वर्ष। उत्तर तो तैयार था।
सम्राट ने कहाः इंपॉसिबल! यह तो हो नहीं सकता, यह तो असंभव है। तीस साल आपकी उम्र है और सत्तर साल से आप साधना कर रहे हैं। आप पागल तो नहीं हैं। या तो आप पागल हैं या मैं पागल हूं।
उस फकीर ने कहाः हम दोनों पागल हैं।
सम्राट ने कहाः क्या मतलब, तुम मुझे पागल कहते हो? उस फकीर ने कहा कि निश्चित! क्योंकि आप गलत सवाल पूछ रहे हैं और मुझे गलत जवाब देने पड़ रहे हैं, और सब तैयार है। और पहले से नौकर-चाकर ने सब सिखा कर रखा है कि कुछ गड़बड़ मत करना। आप पागल हैं, क्योंकि आप गलत सवाल पूछ रहे हैं और मैं पागल हूं, क्योंकि मैं गलत जवाब दे रहा हूं; लेकिन मेरी मजबूरी है, सब उत्तर तैयार हैं।
हमारे सब उत्तर भी तैयार हैं। अगर परमात्मा के सामने कभी हम खड़े किए
गए और परमात्मा ने हमसे कुछ सवाल पूछे, तो एकाध उत्तर आपका अपना होगा? एकाध ऐसा उत्तर होगा, जो आप कह सकें, मैं दे रहा हूं? अगर एक भी उत्तर आपके पास ऐसा नहीं, तो आपको जीवन की कोई रूप-रेखा, कोई ओर-छोर कुछ भी नहीं मिल सकता।
परमात्मा के सामने आप खड़े हैं, समझ लें और पूछा गया है कुछ, एक भी उत्तर आपके पास अपना है या कि सब सीखा हुआ है? स्कूल में सीखा हुआ, पाठशाला में सीखा हुआ, गुरु के पास, साधु के पास, मुनि के पास, शास्त्र में, समाज से, मां-बाप से, सब सीखा हुआ है, एक भी उत्तर आपका अपना नहीं है।
कम से कम जीवन के संबंध में तो एक उत्तर अपना होना चाहिए। जीवन क्या
है यह प्रश्न ही पैदा नहीं होता हमारे भीतर, उत्तर कहां से आएगा। यह प्रश्न ही हमने नहीं पूछा और हम पूछने में डरते भी हैं, क्योंकि अगर हम यह पूछेंगे तो जिसे हम जीवन समझ रहे हैं, वह सब अस्त-व्यस्त होना शुरू हो सकता है।
एक आदमी पागलों की तरह धन इकट्ठा किए जा रहा है। अगर वह पूछे कि जीवन क्या है? तो निश्चित है यह बात कि वह पागल की तरह कल धन इकट्ठा नहीं कर सकेगा। यह प्रश्न सब गड़बड़ कर देगा। अगर धन पागल की तरह इकट्ठा करते चले जाना है, तो यह प्रश्न सब गड़बड़ कर देगा। अगर धन पागल की तरह इकट्ठा करते चले जाना है, तो प्रश्न से बचना जरूरी है। इसलिए हम सब अवाइड कर रहे हैं। जिंदगी के असली सवालों को हटाते हैं। कहते हैं कल पूछ लेंगे।
जवान आदमी कहता है, अभी तो मैं जवान हूं, परमात्मा की बातचीत बुढ़ापे में पूछ लूंगा। आदमी कहता है कल पूछ लेंगे, परसों पूछ लेंगे। रोज हम आगे टालते हैं, रोज हम आगे टालते हैं। क्यों इतना डर है। जीवन के असली सवाल जो अभी इसी वक्त पूछे जाने चाहिए, क्योंकि जिंदगी का अगर कोई भी अर्थ खुल सकता है, तो अभी और यहां, हियर एण्ड नाउ! कल नहीं, क्योंकि कल तो है ही नहीं, जो भी है आज और अभी है।
मैंने सुना है, एक सूफी फकीर एक तीर्थयात्रा पर निकला हुआ है। चार-छह मित्र और साथ थे। एक गांव में ठहरे। उन चारों ने भीख मांगी और उस सूफी फकीर

को कहा कि तुम जाओ और बाजार से हलवा खरीद लाओ। वह हलुआ खरीद कर ले आया। फिर उन पांचों में विवाद होने लगा, क्योंकि हलुआ थोड़ा था और वे पांच ज्यादा थे, भूख ज्यादा थी।
और उनमें विवाद होने लगा कि सबसे ज्यादा हिस्सा किसे मिलना चाहिए। उनमें एक भक्त था, उसने कहाः मैं भगवान का सबसे ज्यादा प्यारा हूं, मुझे हिस्सा ज्यादा मिलना चाहिए। उनमें एक योगी था, उसने कहा क्याः बात करते हो, मुझसे ज्यादा शीर्षासन किसी ने कभी नहीं किया, मुझे ज्यादा मिलना चाहिए। उनमें तीसरा एक पंडित था, उसने कहाः मेरे से ज्यादा शास्त्र जानने वाला कोई भी नहीं है। हलुआ पर पहला हक मेरा है, जो बचे वह तुम्हारा, पहले मैं लूंगा।
आखिर विवाद बढ़ गया और सुबह तो बीत गई, सांझ हो गई। वह हलुआ एक तरफ रखा है, विवाद बढ़ता चला गया और निर्णय नहीं हो सका कि कौन ले। तब उस सूफी फकीर ने कहाः एक काम किया जाए हम पांचों सो जाएं, रात जो सबसे श्रेष्ठ सपना देखे, वह सुबह बताए। हम पांचों अपने सपने बताएं जिसका श्रेष्ठतम सपना होगा, वही मालिक होगा।
रात-भर सोना पड़ा। सुबह उठते ही भक्त ने कहाः मैंने सपना देखा कि भगवान खड़े हैं और कह रहे हैं तुझसे ज्यादा प्यारा भक्त मेरा कोई भी नहीं है। इसलिए मैं कहता हूं, हलवे पर मेरा हक है। योगी ने कहा कि मैं जैसे ही सोया, देखा कि समाधि की अवस्था में चला गया हूं। ऐसी निर्विकल्प समाधि, मुश्किल से ही कभी किसी को मिलती है। हकदार मैं हूं। उन चारों ने अपने दावे किए। फिर पांचवां, उस सूफी फकीर का सवाल आया। उससे पूछाः तुम्हारा क्या कहना है। उसने कहाः मुझे... मैंने रात में देखा, भगवान मुझसे कह रहे हैं उठ, हलवा खा, तो मजबूरी थी, आज्ञा मुझे पालन करनी पड़ी, मैं तो हलुआ खा गया।
उस सूफी फकीर ने अपनी आत्म-कथा में यह कहानी लिखी है और उसने लिखा है
यह कहानी सिर्फ हंसने के लिए नहीं है, जिन्हें जीवन का स्वाद चखना है, उन्हें भी "उठ और अभी चख", वही आदेश, वह कल के लिए नहीं हो सकता। और जो सपने देख रहे हैं, वे कल के लिए खोते चले जाएंगे।
जीवन एक प्रश्न बनना चाहिए। अपनी जिंदगी को एक प्रश्न बनाइए। कठिनाई होगी, बेचैनी होगी, जिंदगी में बहुत प्रश्न वैसे ही हैं, यह प्रश्न और परेशान करेगा। लेकिन इस प्रश्न की बेचैनी बड़ी सार्थक है, अगर यह प्रश्न बेचैन कर दे, तो हम बहुत शीघ्र जीवन के द्वार पर भी पहुंच सकते हैं। अगर यह प्रश्न पूरे प्राणों को मथ डालें, तो वह अमृत भी निकल सकता है, जो मंथन से निकलता है।
अगर यह प्रश्न धक्का दे दे और किसी यात्रा पर पहुंचा दे, तो हम वहां भी पहुंच सकते हैं, जहां प्रभु का मंदिर है। लेकिन यह प्रश्न की बेचैनी लेनी जरूरी है। इसलिए पहला सूत्र जीवन क्रांति के लिए आपसे कहता हूंः एक प्रश्न पूछने वाला चित्त चाहिए; जवाब पकड़ लेने वाला नहीं, उत्तर पकड़ लेने वाला नहीं, प्रश्न पूछने वाला चित्त।
हिम्मतवर आदमी पूछता है, नपुंसक व कमजोर केवल दूसरे के उत्तर पकड़ लेता है और बैठ जाता है। कोई हिंदू बन बैठ गया, कोई मुसलमान, कोई जैन, कोई ईसाई, कोई सिख, कोई कुछ और। हम सारे लोग कुछ बन बैठ गए हैं। यह हम कैसे बन कर बैठ गए हैं? ये उत्तर हमारे सीखे हुए हैं। ये हमने नहीं पूछे हैं, ये हमने परमात्मा से सीधी टक्कर नहीं ली है। हम आमने-सामने खड़े नहीं हुए हैं। हमने कोई एनकाउंटर नहीं किया। हमने जिंदगी को पकड़ कर नहीं पूछा कि क्या हो, हमने दूसरों के उदाहरण, उत्तर मान लिए और फिजूल चीजों को हम नापते फिर रहे हैं।
एक आदमी बाजार में दो पैसे की मटकी खरीदता है, तो चारों तरफ ठोक-बजा कर देखता है। एक मटकी दो पैसे की खरीदने वाला ठोक-बजा कर देख रहा है और जिंदगी! जिंदगी हम सब उधार, बारूद दूसरे के ज्ञान पर बैठे हुए। दूसरे के ज्ञान पर बैठा हुआ आदमी अज्ञान पर बैठा हुआ है। दूसरे के ज्ञान को जिसने अपनी मुट्ठी में बांधा है, वह समझ ले कि उसकी मुट्ठी में कुछ भी नहीं है। दूसरे के ज्ञान के आधार पर जिसने समझ लिया कि मैं जान गया हूं, उससे ज्यादा खतरनाक अज्ञानी खोजना मुश्किल है। दूसरों के उधार उत्तर जिसके पास हैं और अपना प्रश्न नहीं है, वह आदमी मुर्दा है, वह आदमी जिंदा नहीं है।

एक तीर चाहिए पूछने वाला प्राणों में, जो पूछे। और अगर हम पूछने की हिम्मत जुटाएं, तो परमात्मा उत्तर देने को हमेशा तैयार है। लेकिन हम पूछेंगे ही नहीं, तो उत्तर भी उसका नहीं आ सकता है। जो पूछते हैं, उन्हें उत्तर मिलता है।
एक फकीर था, वह रोज-रोज यह कहता था कि द्वार खटखटाओ और द्वार खुलेंगे। जैसे जीसस ने कहा है, नोक एंड द डोर शैल बी ओपन टू यू। खटखटाओ और द्वार खुलेंगे।
एक बूढ़ी औरत राबिया भी उसकी सभाओं में बैठ कर सुना करती थी। वह रोज कहता थाः खटखटाओ, दरवाजे खुलेंगे। एक दिन राबिया खड़ी हुई और उस बूढ़ी औरत ने कहाः बहुत हो चुका सुनते-सुनते खटखटाओ, खटखटाओ, कब तक कहते रहोगे खटखटाओ? द्वार बंद ही नहीं है। आंख खोल कर देखो, द्वार खुला हुआ है। लेकिन आंख कौन उठाए, प्रश्न से भरी आंख खोज शुरू कर देती है। प्रश्न
से भरी आंख उठती है, प्रश्न से भरी आंख पूछती है। और जो पूछता है, वह किसी न किसी क्षण उपलब्ध हो जाता है उस उत्तर को, जिसे पा लेने के बाद जीवन क्या है यह हमें दूसरों से नहीं पूछना पड़ता। जीवन क्या है यह हम जान लेते हैं। जब हम जीवन को जानते हैं इस तरह, जैसे खून दौड़ता हो अपनी नसों में और
जब हम जीवन को जानते हैं इस तरह, जैसे श्वास दौड़ती हो फेफड़ों में और जब हम जीवन को जानते हैं इस तरह, जैसे प्रेम हृदय के कोनों में सरकता हो, और जब हम जीवन को जानते हैं इस तरह, जैसे गंगा बहती है, हवाएं बहती हैं, आकाश में तारे खिलते हैं। जब हम जीवन को उसकी पूरी समग्रता में अपने प्राणों से जानते हैं, तो एक विस्फोट, एक एक्सप्लोजन होता है। एक नया आदमी हमारी जगह आ जाता है। हम गए तो वह ओल्ड मैन, वह जो पुराना आदमी था, वह गया। उसकी जगह एक बिल्कुल नया आदमी आ जाता है। उस नए, ताजे आदमी का नाम ही धार्मिक आदमी है। इन तीन दिनों में मैं उन सूत्रों की बात करूंगा कि वह नया आदमी कैसे आ जाए। प्रत्येक के भीतर वह मौजूद है--बुलाना है, पुकारना है, उसे बाहर लाना है। ऊपर हम खोल, पुराने कपड़े पहने बैठे हुए हैं। इन्हें फेंक देना है। इनके फेंकते ही नया अंकुर भीतर से निकल आएगा--और उस अंकुर पर बड़े फूल खिलते हैं, उन खिले हुए फूलों का नाम ही परमात्मा का अनुभव है; उन फूलों से बड़ी सुगंध फैलती है, उस फैली हुई सुगंध का नाम ही प्रार्थना है। उन फूलों में बड़ा अमृत है; उस अमृत को जो जान लेता है, उसे जानने के लिए फिर कुछ शेष नहीं रह जाता। उस अमृत को जो पा लेता है, वह सब पा लेता है।
उस अमृत के पा लेने वाले से तुम सब छीन लो, तो वह हंसता रहेगा, क्योंकि तुम उसका कुछ भी नहीं छीन सकते हो। उसने वह चीज पा ली, जो नहीं छीनी जा सकती है। और हमारे पास जो कुछ भी है, वह सब छीना जा सकता है। जिसके पास वही संपदा है, जो छीनी जा सकती है, वह आदमी निर्धन है और जिसके पास वह संपदा आ जाती है, जो नहीं छीनी जा सकती, वह आदमी संपत्तिशाली हो जाता है, वह प्रभु के राज्य का मालिक हो जाता है।
तो आज एक प्रश्न पूछने के सूत्र पर आपको छोड़ देता हूं। पूछें, रात सोते पूछें, सुबह उठ कर पूछें, खाना खाते पूछें, दुकान पर काम करते पूछें, दफ्तर में जाकर पूछेंः जीवन क्या है? क्या यही जीवन है? कोल्हू के बैल की तरह मैं घूमता रहूं, मैं घूमता रहूं, यही है जीवन? और किसी बंधे, बासे उत्तर को स्वीकार न करें। निश्चय ही वह उत्तर आएगा जो आपका अपना है और जो परमात्मा देता है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं।
और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन क्रांति के सूत्र
दूसरा प्रवचन

जीवन ऊर्जा के प्रति सजगता

मेरे प्रिय आत्मन्!
जीवन क्रांति के सूत्रों के संबंध में पहले सूत्र पर कल हमने बात की।
एक पूछती हुई चेतना, एक जिज्ञासा से भरा हुआ मन, एक ऐसा व्यक्तित्व जो जो है वहीं ठहर नहीं गया बल्कि वह होना चाहता है जो होने के लिए पैदा हुआ है। एक तो ऐसा बीज है जो बीज होकर ही नष्ट हो जाता है और एक ऐसा बीज है जो फूल के खिलने तक की यात्रा करता है, सूरज का साक्षात्कार करता है और अपनी सुगंध से दिग्दिगंत को भर जाता है।
मनुष्य भी दो प्रकार के हैं। एक वे जो जन्म के साथ ही समाप्त हो जाते हैं; जीते हैं, लेकिन वह जीना उनकी यात्रा नहीं है। वह जीना केवल श्वास लेना है। वह जीना केवल मरने की प्रतीक्षा करना है। उस जीवन का एक ही अर्थ हो सकता है, उम्र। उस जीवन का एक ही अर्थ है, समय को बिता देना। जन्म और मृत्यु के बीच के काल को बिता देने को बहुत लोग जीवन समझ लेते हैं, एक तो ऐसे लोग हैं। एक वे लोग हैं, जो जन्म को एक बीज मानते हैं और उस बीज के साथ श्रम करते हैं कि जीवन का पौधा विकसित हो सके। जो जिज्ञासा करते हैं, वे दूसरे तरह के मनुष्य होने का पहला कदम उठाते हैं।
दूसरा कदम क्या है? दूसरा सूत्र क्या है? दूसरे सूत्र के संबंध में पहली बात, हम निरंतर सुनते हैं, स्वयं को जानो। नो दाई सेल्फ। सुनते हैं, लेकिन कुछ अर्थ जाहिर नहीं होता। हम यह भी सुनते हैं कि जो ऊपर आकाश में है, वह परमात्मा जिसकी तरफ हाथ उठते हैं कभी, वह प्रत्येक के भीतर भी है। यह भी हम सुनते हैं कि हमारे भीतर वह है, लेकिन हमारे भीतर उसका कोई भी पता हमें नहीं चलता है। हमारे भीतर तो हमीं हैं, उसका तो कोई पता नहीं चलता है! और हम अगर परमात्मा हैं, तो हंसी आने जैसी बात है। हम कैसे परमात्मा हैं? पशु तो मिल सकता है हमारे भीतर, परमात्मा का तो कोई पता नहीं चलता है। लेकिन सुनते हैं, सुन लेते हैं, यह भी सुन लेते हैं कि जिसे खोजना है, वह बाहर नहीं है। यह भी सुन लेते हैं कि भीतर छिपा है सारा राज, सारा रहस्य। वहीं खोजना है। लेकिन कहां खोजें? भीतर यानी क्या? कहां जाएं? किससे पूछें भीतर? कहां है द्वार? कहां है रास्ता? कहां है मार्ग? कहां छिपी है वह ऊर्जा? कहां है वह शक्ति का स्रोत? वह बीज कहां है जो हमारे भीतर है, और फूल बन सकता है? उस बीज का पता चले तो हम खाद भी खोज लें, भूमि भी खोज लें। पानी भी जुटा दें। लेकिन वह बीज कहां है? आज इस दूसरे सूत्रा में उस बीज के संबंध में ही कुछ मैं आपसे कहना चाहता हूं। निश्चित ही वह बीज प्रत्येक के भीतर है। हम प्रत्येक वही बीज हैं, लेकिन वह कहां है?
अगर हम पशुओं में खोजने जाएं, तो एक बात स्पष्ट दिखाई पड़ेगी। पशुओं का केंद्र, उनके जीवन-ऊर्जा का बिंदु, जहां से वे जीते हैं, जहां वे रहते हैं, वह बिंदु कहां है? पशु का बिंदु खोजें, तो अपना बिंदु भी खोजने में सरलता होगी, क्योंकि हम भी पशुओं की कड़ी में आगे के एक पशु से ज्यादा नहीं हैं। अभी तो ज्यादा नहीं हैं। ज्यादा हो सकते हैं, लेकिन हैं नहीं। मनुष्य भी पशुओं की कड़ी में आगे की एक कड़ी है और उस कड़ी में जन्म के साथ कोई बुनियादी फर्क नहीं पड़ जाता है, जहां पशु जीता है, वहीं हम जीते हैं। जहां पशु का केंद्र है, वहीं हमारा केंद्र है। पशुओं का केंद्र कहां है?
पशुओं के लिए न तो कोई परमात्मा है, न कोई आत्मा है। पशुओं के लिए न कोई सत्य है, न कोई जीवन की खोज। पशु कहां जीते हैं? पशुओं के जीवन का केंद्र है सेक्स। उनके जीवन का केंद्र है काम, यौन। जिस मनुष्य के जीवन का केंद्र ही सेक्स रह जाए, वह मनुष्य पशुओं से ऊपर नहीं उठ सका है। आमतौर से साधारणतः हमारे जीवन का केंद्र भी वही है। मकान भी हम बनाते हैं, तो उस मकान बनाने में पशुओं के बनाए हुए घोंसलों से ज्यादा अर्थ नहीं है। धन भी हम इकट्ठा करते हैं, उस धन में भी पशुओं के संग्रह की जो वृत्ति है, चींटियां संग्रह करती हैं, चिड़ियां संग्रह करती हैं, उससे भिन्न कोई स्थिति नहीं है। अपनी जमीन पर हम लड़ते हैं, एक-एक इंच जमीन पर कि मेरी जमीन

है, मेरे देश की जमीन है, मेरे राष्ट्र की जमीन है। उसमें भी पशुओं का जमीन पर जो कब्जे की प्रवृत्ति होती है, उससे भिन्न प्रवृत्ति नहीं है। पशु भी जिस जमीन पर रहता है, दूसरे पशु का प्रवेश बसदाश्त नहीं करता है।
ध्यान रहे, जब तक जमीन पर हक करने वाले लोग हैं, चाहे व्यक्ति, चाहे समाज, चाहे राष्ट्र, तब तक आदमी पशुता से ऊपर नहीं उठ सकता है। सारी राष्ट्रीयताएं, सारे जमीन के दावे, पशु का जो दावा है जमीन का, उसी से निकले हुए हैं। और पशु जीता है सेक्स के आस-पास, काम के आस-पास, यौन के आस-पास। वही है उसके जीवन का केंद्र। जीता है, जन्मता है, दूसरों को जन्म देता है और मर जाता है। उसके जन्म का एक ही अर्थ है कि दूसरों को जन्म दे जाए। यह बड़ी अजीब बात है। अंडा मुर्गी बने, मुर्गी फिर अंडे रख जाए। अंडे फिर मुर्गियां बनते रहें, मुर्गियां फिर अंडे रखती रहें। अंडे का काम है मुर्गी पैदा करे। मुर्गी का काम है अंडे पैदा करे। और यह चक्र वीसियस चलता रहे। किसी ने पूछा कि अंडा क्या है? तो किसी ने कहाः अंडा अंडे का मुर्गी के द्वारा फिर अंडा होने का रास्ता है। अंडा ही फिर मुर्गी है, फिर अंडा हो जाता है।
पशु जनन के आस-पास घूम रहे हैं। सारी पशु प्रकृति, सारे पौधों का जगत अपने से दूसरे को जन्म करके मर जाता है, यही उसका लक्ष्य है। अगर कोई आदमी भी सिर्फ इसलिए जी रहा है कि वह कुछ बच्चे पैदा कर जाए, तो वह आदमी पशुओं और पौधों से भिन्न कहां है! साधारणतः लेकिन हमारा केंद्र भी सेक्स है। इसे समझ लेना जरूरी है, क्योंकि उसी केंद्र से वह शक्ति उठ सकती है, वह बीज उठ सकता है, जो परमात्मा तक पहुंच जाए। जैसे एक बीज को हम.जमीन में बो दें, तो बीज की खोल टूट जाती है, एक पौधा निकलता है, आकाश की तरफ उठने लगता है, जमीन से बाहर आ जाता है, फिर फूल खिलते हैं, सुगंध फैलती है।
सेक्स, वह जो मनुष्य की काम की इंद्रिय है, वह जो वासना है, उस वासना के आस-पास ही सारी शक्ति इकट्ठी है, सारी ऊर्जा इकट्ठी है। वह ऊर्जा या तो और बच्चों को पैदा करने में समाप्त होती रहेगी और आदमी नष्ट हो जाएगा या वह ऊर्जा ऊपर की तरफ गतिमान हो सकती है, नीचे की तरफ द्वार छोड़ कर ऊपर की तरफ आगे बढ़ सकती है। और सेक्स की ऊर्जा अगर ऊपर उठने लगे, तो वह मस्तिष्क के उन केंद्रों तक पहुंच जाती है, जहां फूल खिलते हैं, जहां फूल खिल सकते हैं। कहां छिपा है हमारा जीवन? हमारा जीवन हमारे शरीर के ठीक मध्य में छिपा हुआ है। वहां से या तो वह नीचे की तरफ बहेगा और तब आने वाली संततियां पैदा होती रहेंगी या फिर ऊपर की तरफ उठेगा और परमात्मा के अनुभव को उपलब्ध होगा। हम उसे कहां ले जाएंगे, यह हमारे ऊपर निर्भर है। हम उसे कहां ले जा रहे हैं, यह भी हमारे ऊपर निर्भर है। हम उसे नीचे की तरफ बहाते रहेंगे और नष्ट हो जाएंगे। तो हम जो ऊपर की तरफ छिपे हुए रास्ते थे, उनसे कभी परिचित नहीं होंगे। और जो छिपे थे राज और रहस्य और आनंद और सत्य, वे भी अपरिचित रह जाएंगे। तो मैं कहता हूं कि जिज्ञासा करें कि मैं कौन हूं।
कल मैंने आपसे कहा कि चौबीस घंटे के सामान्य जीवन में एक जिज्ञासा पकड़ ले कि मैं कौन हूं। यह प्राणों में हमारे प्रश्न उठने लगे कि मैं कौन हूं। उठते-बैठते, रास्ते पे चलते, चौंक कर हमारे भीतर कोई पूछने लगे कि मैं कौन हूं। रात सोते, बिस्तर पर जाते, सुबह उठते कोई चखने लगे कि मैं कौन हूं, तो आप हैरान हो जाएंगे, जितने जोरसे यह प्रश्न भीतर उठेगा, जितना यह प्रश्न सक्रिय होगा, जितना यह प्रश्न भीतर घूमने लगेगा, उतना ही आप हैरान होंगे कि आपके सेक्स-केंद्रों के आस-पास कोई चीज गतिमान होने लगेगी, कोई चीज कंपने लगेगी, कोई चीज हिलने लगेगी, कोई नया अंकुर आपको भीतर कंपता हुआ, डोलता हुआ, उठता हुआ मालूम पड़ने लगेगा।
इसलिए अक्सर यह होता है कि जो लोग आध्यात्मिक साधना में उतरते हैं, एकदम से उनकी सेक्स की कामना जोर से बढ़ती हुई मालूम होती है। उसके बढ़ने का और कोई कारण नहीं है, जो भी जीवन की जिज्ञासा करेगा, जो भी जीवन की खोज में निकलेगा, सबसे पहले जन्म का जो स्रोत है वहीं उसकी चोट होगी। वहीं से यात्रा शुरू होगी। इसलिए जो भी कोई जिज्ञासा करेगा, साधना में लगेगा, पूछेगा, खोजेगा, उसे अचानक पता चलेगा कि जैसे उसकी काम की वासना तीव्र हो रही है, लेकिन उससे घबड़ाना मत। और जोरसे पूछना और खोजना कि किस जगह, हमारे शरीर के भीतर कौन सी वह जगह है, उसे पिनपॉइंट करना। कहां है वह केंद्र,

जहां कंपन हो रहा है। और अगर उसको ध्यान किया, एकांत में बैठ कर सारे ध्यान को वहां ले गए, जहां कंपन हो रहा है, नई शक्ति उठ रही है, तो आपके भीतर एक नया द्वार खुल जाएगा, जो अभी बंद पड़ा है, एक बीज टूट जाएगा, एक नई यात्रा शुरू हो जाएगी, एक झरने का पत्थर हट जाएगा और एक झरना बहना शुरू हो जाएगा। लेकिन हमने कभी पूछा नहीं है। अगर कोई व्यक्ति थोड़ी देर एकान्त में बैठ कर सिर्फ यही पूछे कि मैं कौन हूं? और सिफर्ष् एक ही बात पूछता चला जाए कि मैं कौन हूं, मैं कौन हूं; तो वह हैरान हो जाएगा कि मैं कौन हूं की सारी चोट कामवासना के केंद्र पर पड़ती है। वह जो "हूं" की आखिरी चोट है, वह कामवासना के केंद्र पर पड़ती है। वहां कोई चीज कंपनी शुरू हो जाती है और जगनी शुरू हो जाती है। वहां शक्ति इकट्ठी है, वहां रिजर्वायर है, वहां संगृहीत है सब-कुछ। वह नीचे की तरफ भी बह सकता है, वह ऊपर की तरफ भी ले जाया जा सकता है। सिर्फ शास्त्र पढ़ लेने से और मैं आत्मा हूं। इस तरह की बातें सीख लेने से कोई कहीं पहुंच नहीं सकता। कुछ करना पड़ेगा।
पहली बात हैः जिज्ञासा। दूसरी बात हैः जिज्ञासा का केंद्र। कहां हम जिज्ञासा को केंद्रित करें? कहां हम पूछें? किस जगह हम चोट करें? कहां सारा चित्त एकाग्र होकर चोट करे? जैसे कोई आदमी जमीन खोदता हो, तो एक ही जगह जमीन खोदे, तो थोड़ी गहराई में पत्थर निकल जाएंगे, मिट्टी निकल जाएगी, कचरा-कूड़ा निकल जाएगा और जल-स्रोत प्रकट होने शुरू हो जाएंगे। लेकिन कोई दूसरा आदमी एक जगह दो हाथ जमीन खोदे, दूसरी जगह चार हाथ जमीन खोदे, तीसरी जगह कुछ और जमीन खोदे। तो खोद तो बहुत लेगा। लेकिन कभी कहीं से पानी नहीं निकलेगा।
ध्यान रहे, जो लोग साधना में जा रहे हैं, वे जीवन के कुएं को खोदने के
लिए जा रहे हैं। उनके सामने बहुत स्पष्ट होना चाहिए कि उनकी सारी जिज्ञासा, उनकी सारी साधना, उनका सारा ध्यान, उनके सारे जीवन का जो बोध है, जो अवेयरनेस है, वह किसी एक जगह पर निरंतर चोट करती रहे, निरंतर चोट करती रहे, ताकि वहां के पर्दे टूट जाएं, वहां की मिट्टी कट जाए, वहां की चट्टान कट और जीवन के जोोत हैं, वे प्रकट होने शुरू हो जाएं।
एक बात ध्यान में ले लेना और यह बात मनुष्यता के ध्यान से बिल्कुल हट
गई है और इसके हट जाने का कारण यह है कि सेक्स के संबंध में हम किसी को कभी कुछ नहीं कहते हैं। बच्चों से कुछ बात नहीं करते हैं और हमें यह पता नहीं कि जिसकी हम बात नहीं कर रहे हैं, वहीं वह शक्ति भी छिपी है, जो परमात्मा तक ले जाने का रास्ता बनेगी। निश्चित ही वहीं वह शक्ति भी छिपी है, जो पशु तक ले जाती है। वहीं वह शक्ति भी छिपी है, जो अंधकार में उतार देती है। वहीं वह शक्ति भी छिपी है, जो प्रकाश में ले जाती है। लेकिन अगर उसकी बात छिपा ली, अगर सब तरफ से पर्दे में कर ली और किसी को पता नहीं चला, तो वह बीज प्रकाश की तरफ तो नहीं जा सकेगा, ध्यान रखना, अंधेरे की तरफ अपने आप चला जाएगा, क्योंकि नीचे जाने के लिए किसी के सहारे की, साथ की, ज्ञान की कोई भी जरूरत नहीं होती है। नीचे उतरना अपने से हो जाता है। नीचे उतरना इंस्टिक्टिव है। नीचे उतरना प्राकृतिक है।
इसलिए जब बच्चा जवान होगा, सेक्स की नीचे की यात्रा अपने आप शुरू हो जाएगी। और ऊपर की यात्रा के संबंध में न उसे कभी कुछ कहा गया है, न उसे कभी बताया गया है। उसके मां-बाप ने, उसके समाज ने, उसके शिक्षकों ने डर के कि कहीं खतरा न हो जाए, अंधकार में कोई न चला जाए, सारी बात छिपा ली है। वह छिपाना बहुत खतरनाक हो गया है, क्योंकि उसका परिणाम एक हुआ है कि जो शक्ति ऊपर ले जा सकती थी, वह सिर्फ नीचे ले जाती है, और कहीं भी नहीं ले जाती।
तो आज दूसरे सूत्रा पर मैं आपको उस केंद्र की तरफ इशारा करना चाहता हूं, जिसके प्रति आप सजग हो जाएं, तो आपके जीवन में क्रांति हो जाएगी। और अगर उसके प्रति आप सजग नहीं होते, तो आपके जीवन में कभी कोई क्रांति नहीं हो सकती है। जीवन की क्रांति कहां से होगी? कहां है वह आग, जहां से हम जलाएंगे दीये को? वह हमारे भीतर कहां है? वह हमारे भीतर मस्तिष्क में नहीं है। वह आग, वह हमारे हृदय में भी नहीं है। वह आग हमारे सेक्स सेंटर पर केंद्रित है और वह वहां से उठे, तो वह हृदय तक भी आएगी। और जब वह आग, वह जलती हुई ज्योति हृदय पर आती है, तो सारा जीवन प्रेम हो जाता है। और जब वही आग और जलती हुई ज्योति मस्तिष्क तक आती है, तो सारा जीवन ज्ञान हो जाता है।

लेकिन वही है आग और वह अभी सेक्स सेंटर पर केंद्रित है। वह वहीं रुकी हुई है। वहीं छेद है, वह वहीं से बहती जा रही है। वहीं से जैसे किसी घड़े में छेद हो, उसका सारा पानी गिरता जाता हो। और वहां से ऊपर उठाने का तो कोई सवाल ही नहीं है।
अगर सेक्स की ऊर्जा नीचे की तरफ बहती रहे, तो हम सिर्फ पशु की तरह व्यवहार करते हैं, हम मनुष्य कभी नहीं हो पाते। हम कितना ही ढांक लें अपने को, छिपा लें, लेकिन हमारे भीतर पशु ही बैठा होता है। हमारी सारी शिष्टता, हमारी सारी सभ्यता, हमारी सारी संस्कृति हमें सुसंस्कृत पशु बना देती है और कुछ भी नहीं। लेकिन हमारे भीतर वही बैठा होता है। जाएं, हमारी फिल्म देख लें, हमारी साहित्य की किताब पढ़ लें, हमारी कविता पढ़ें, हमारा संगीत सुनें, हमारा नृत्य देखें, और सबके पीछे घूम-फिर कर सेक्स खड़ा हुआ दिखाई पड़ेगा।
हमारे जीवन के सारे पहलुओं में हमने सब तरफ से छिपाने की कोशिश की है, लेकिन सेक्स वहां खड़ा हुआ है। उसे हम छिपा भी नहीं सकते। हम उसे बदल सकते हैं, छिपा नहीं सकते। और अगर हम उसे बदल लें, तो जिसे हम सेक्स जानते हैं, जिसे हम काम कहते हैं, वही राम बन जाता है। लेकिन उसे हम बदलेंगे तब, जब हम पहचान लें कि वह कहां है। उसका ठीक ऑब्जर्वेशन, ठीक निरीक्षण चाहिए, ठीक जगह पर श्रम चाहिए। और ठीक जगह पर श्रम न हो, तो हम भटकते रहें, हम श्रम करते रहें, उसका कोई परिणाम नहीं हो सकता है।
इसलिए दूसरे सूत्र में आपसे कहना चाहता हूंः अपनी सेक्स-ऊर्जा को, अपनी वीर्य की शक्ति को छिपा कर भूल कर अंधेरे में डाल कर मत बैठे रहना, अन्यथा जीवन के सत्य के मंदिर तक कभी भी नहीं पहुंच सकोगे। वही वीर्य की शक्ति है जो ले जाएगी। उसके प्रति सचेत होना जरूरी है, उसके प्रति जागरूक होना जरूरी है।
और तीसरे सूत्र में आपको कहना चाहूंगा कि उसे फिर कैसे ट्रांसफर्म करें? कैसे रूपांतरित करें? लेकिन दूसरे सूत्र में उसे पहचानना जरूरी है। हमारे प्रत्येक के शरीर के भीतर कहां है केंद्र उर्जा का, शक्ति का, वह हमें जान लेना चाहिए। एक छोटे से अणु को तोड़ कर वैज्ञानिक कितनी बड़ी शक्ति को उपलब्ध हुए हैं। अणु तो हमेशा से थे, लेकिन इस सदी के पहले अणु की शक्ति का किसी को पता नहीं था। और अगर आज से सौ साल पहले, दो सौ साल पहले, हजार साल पहले कोई कहता कि छोटे से अणु के विस्फोट से हिरोशिमा और नागासाकी के एक लाख बीस हजार लोग जल कर राख हो जाएंगे, एक छोटे से अणु के विस्फोट से, तो लोग हंसते और कहते, तुम पागल हो गए हो। एक छोटे से अणु में इतना विस्फोट कैसे हो सकता है?
लेकिन क्या कभी आपने सोचा कि एक साधारण से आक्सीजन या हाइड्रोजन के
या किसी के भी अणु के विस्फोट से इतना परिणाम हो सकता है? तो सेक्स का अणु तो जीवित अणु है, वह तो लिविंग एटम है, अभी तो हमने डेड एटम, मरे हुए अणु का विस्फोट किया है। जिस दिन हम जीवित अणु का विस्फोट कर सकेंगे, उस दिन क्या होगा?
धर्म की सारी खोज, योग की सारी साधना, तंत्र के सारे नियम वह जो लिविंग एटम है, वह जो जीवित अणु है, उसमें छिपी हुई शक्ति को विस्फोट करके ऊपर की तरफ ले जाने की विधि के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। लेकिन उसका हमें कोई बोध नहीं है, उससे हम डरे हुए भी हैं। खतरनाक भी है। आखिर एटम का विस्फोट खतरनाक सिद्ध हुआ। खतरनाक हाथों में कोई भी शक्ति खतरनाक हो सकती है। शायद इसीलिए शक्ति का जो सबसे महत्वपूर्ण पुंज है मनुष्य के भीतर, उसे छिपा देने का आयोजन किया गया है कि वह छिपा रहे, किसी को पता न चले। कहीं शक्ति खतरनाक हाथों में न पड़ जाए। लेकिन शक्ति अपने आप में अशुभ नहीं होती, न शुभ होती है। उसे शुभ की तरफ ले जाया जा सकता है और अशुभ की तरफ भी। और जो अशुभ के डर से रुक जाएगा, वह शुभ की तरफ भी नहीं ले जा सकेगा।
इसलिए मनुष्यता ठहर गई है। मनुष्य को जमीन पर आए हुए अंदाजन बीस लाख वर्ष होते हैं। लेकिन बीस लाख वर्षों में सौ, दो सौ मनुष्य उस स्थिति को उपलब्ध हो सके हैं, जहां प्रत्येक मनुष्य को पहुंच जाना चाहिए था। कुछ अंगुलियों पर गिने जाने वाले लोग ठीक अर्थों में मनुष्य हो सके हैं बीस लाख वर्षों में।

और यह जो वृहत्तर मनुष्यता है, यह सिर्फ पशु के तल पर जी रही है। बच्चों को पैदा करता है आदमी और समाप्त हो जाता है। मां बेटी को जन्म दे जाती है और समाप्त हो जाती है, बाप बेटे को जन्म दे देता है और समाप्त हो जाता है। लेकिन स्वयं के भीतर जो छिपे थे ऊपर के द्वार उनसे वह परिचित भी नहीं हो पाता। बाहर से देखके शरीर को कोई पहचान भी नहीं सकता कि इसके भीतर परमात्मा भी छिपा हुआ हो सकता है। और अगर एक फिजियोलॉजिस्ट के पास जाएंगे, शरीर शास्त्री के पास, तो वह काट कर सारे शरीर को बता देगा और कहेगा, यहां तो ऐसी कोई चीज नहीं दिखाई पड़ती। यहां तो ऐसा कुछ नहीं दिखाई पड़ता। यहां तो कोई ऐसी शक्ति नहीं दिखाई पड़ती, जो ऊपर उठ जाए।
नहीं दिखाई पड़ती है। सच तो यह है, जो भी गहरा है और महत्वपूर्ण है, वह कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता? एटम दिखाई पड़ते हैं? इलेक्ट्रॉन दिखाई पड़ता है? न्यूट्रॉन दिखाई पड़ता है? क्या दिखाई पड़ता है? जितना हम पदार्थ के भीतर घुसे हैं, उतना हम वहां पहुंच गए हैं, जहां दिखाई पड़ना बंद हो गया है। जहां हम सिर्फ परिणाम देखते हैं, इफेक्ट्स दिखाई पड़ते हैं, लेकिन क्या है वह, तो कुछ नहीं दिखाई पड़ता। जितना हम पदार्थ के भीतर गए हैं, वहां भी वह जगह आ गई है, जहां दिखाई नहीं पड़ता। जितना आदमी स्वयं के भीतर गया, वहां भी वह जगह आ जाती है, जहां दिखाई पड़ना बंद हो जाता है। लेकिन हम पदार्थ के संबंध में अदृश्य को मान लेते हैं। और मनुष्य के संबंध में आदमी के शरीर की चीर-फाड़ करते हैं और कहते हैं, यहां तो कुछ दिखाई नहीं पड़ता।
लेकिन वहां भी दिखाई पड़ सकता है। दूसरे को नहीं, मेरे भीतर मुझे दिखाई
पड़ सकता है, आपके भीतर आपको दिखाई पड़ सकता है। और अगर मुझे मेरे भीतर दिखाई पड़ जाए, तो आपके भीतर भी दिखाई पड़ना शुरू हो जाता है। लेकिन मैं किसी दूसरे को नहीं दिखा सकता।
अब आप यहां इतने लोग बैठे हैं। अगर मैं यह कहूं कि यहां आप ही मुझे नहीं दिखाई पड़ रहे, बल्कि वह भी दिखाई पड़ रहा है, जो आपके भीतर इकट्ठा है। लेकिन इसे मैं किसी दूसरे को नहीं दिखा सकता। और वह कहां तक भरा है, वह भी दिखाई पड़ सकता है, लेकिन वह दिखाई पड़ना पार्थिव नहीं है। और जीवन में जो पार्थिव पर ही रुक जाता है और कहता है कि जो दिखाई पड़ेगा, वहीं तक हम ठहर जाएंगे, वह आदमी बीज को अगर उसे दे दे, तो बीज को तोड़-फोड़ कर देख लेगा, उसमें फूल कहीं नहीं दिखाई पड़ेगा। उसमें फूल है।
शायद आपको पता न हो, एक वैज्ञानिक कुछ प्रयोग कर रहा था और एक आश्चर्यजनक घटना घटी। वह एक बहुत ही बारीक दूरबीन से किसी बीज को देख रहा था और देख कर हैरान हुआ कि जब वह उस बीज को देख रहा था, अचानक एक क्षण को उसे फूल दिखाई पड़ा, बीज नहीं था। उसने आंखें तिलमिला कर, वापस गौर से देखा, लेकिन उसे फिर भी फूल दिखाई पड़ा। दूरबीन अलग की है, तो वहां बीज है। वह दूसरों को बताने लगा, लेकिन दूसरों को तो वहां कुछ नहीं, बीज ही दिखाई पड़ता था। वह वैज्ञानिक उस बीज को बोया, उस बीज में फूल आया और वह देख कर दंग रह गया कि वह फूल वही है, जो उसे दूरबीन से दिखाई पड़ा था।
यह तो बिल्कुल असंभव मालूम पड़ता है। लेकिन बहुत असंभव नहीं भी है, क्योंकि फूल किसी न किसी अर्थ में बीज के भीतर छिपा है। और आज नहीं तो कल, हम कुछ ऐसी बातें खोज सकते हैं कि वह जो छिपा है, कल प्रकट होगा, वह आज दिखाई पड़ जाए। जो भविष्य में है, वह आज दिखाई पड़ जाए। असल में जो भविष्य में है, वह हमारी देखने की सीमा के बाहर है।
यहां बैठे हुए हैं, हमारे ऊपर दरख्त पर एक आदमी बैठा हुआ हो, रास्ता चल रहा है, हम दरख्त के नीचे बैठे हैं। एक बैलगाड़ी दिखाई पड़ती है, थोड़ी दूर पर, दो फर्लांग दूर पर एक बैलगाड़ी आ रही है, उसके पार हमें कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। उसके पार भी कोई बैलगाड़ी आती है, लेकिन हमें दिखाई नहीं पड़ती। वह दरख्त पर बैठा हुआ आदमी कहता है, एक बैलगाड़ी और है। लेकिन हम कहते हैं, हमें दिखाई नहीं पड़ती, नहीं हो सकती। वह आदमी कहता है, आती है, हम कहते हैं, भविष्य में है, अभी कैसे पता चल सकता है। लेकिन हम ही भविष्य में हैं, क्योंकि हम नीचे बैठे हैं। वह ऊपर वृक्ष पर बैठे वाले को वर्तमान में हो सकती है, क्योंकि वह ऊपर बैठा है। और जितनी चेतना ऊपर उठती चली जाए, वे सारी संभावनाएं जो कल हो सकती हैं, वे आज दिखाई पड़ सकती हैं।

शायद आपको पता हो, बुद्ध का जन्म हुआ और एक बहुत अदभुत घटना घटी। बुद्ध का जन्म हुआ और हिमालय से एक संन्यासी उतरा। और जब वह अपने आश्रम से उतरने लगा, तो उसके मित्रों ने कहाः कहां जाते हो? उसने कहाः मैं जाता हूं, उस व्यक्ति का जन्म हुआ है, जो शीघ्र ही बुद्ध हो जाएगा। लेकिन तब तक मैं नहीं बचूंगा। मैं उसका बुद्ध रूप में कभी भी दर्शन नहीं कर पाऊंगा। मैं उसका अभी दर्शन कर आता हूं।
वह संन्यासी बुद्ध के घर आया। बुद्ध के पिता अपने छोटे से बच्चे को लेकर उसके सामने आए। उस संन्यासी ने पैर पकड़े और उसकी आंख से आंसू बहने लगे। बुद्ध के पिता बहुत घबड़ा गए। और उन्होंने कहाः आप रोते हैं? आशीर्वाद दें। आप रोते हैं, तो हम घबड़ाते हैं। कोई अपशगुन तो होने को नहीं? उस वृद्ध संन्यासी ने कहाः नहीं, अपशगुन होने को नहीं है। मैं अपने लिए रोता हूं। जिसे मैं बीज की तरह देख रहा हूं, उसे मैं फूल की तरह नहीं देख पाऊंगा। मैं तो खतम हो जाने को हूं छह महीने में। यह फूल खिलेगा, लेकिन मैं नहीं देख पाऊंगा। यह व्यक्ति बुद्ध होगा, यह जागेगा, इसकी छाया, इसके प्रकाश के नीचे बहुत लोगों को बहुत कुछ दिखाई पड़ेगा। मैं चूक जाऊंगा, मैं वंचित रह जाऊंगा।
बुद्ध के पिता को कुछ भी समझ में नहीं आता है। एक बीज के पास बैठके कोई फूल की बात करने लगे, तो हमको समझ में आएगा? एक बीज के पास बैठ कर फूल की बात करने वाला पागल मालूम होगा। बुद्ध के पिता को भी वह आदमी पागल मालूम हुआ था। लेकिन जब बुद्ध का फूल खिला, तो बुद्ध के पिता ने क्षमा मांगी कि मैं हंसा था उस दिन, उस बूढ़े आदमी पर, मुझे क्या पता था! मुझे क्या पता था कि चीजें आगे दिखाई पड़ सकती हैं।
हम सबके भीतर भी छिपा है जो, वह आगे की पूरी खबरें अभी दे रहा है। अगर
हम खोजने चलें तो हमें पता चलेगा कि वह कितनी दूर तक विकसित हुआ है। अगर कोई व्यक्ति जिज्ञासा करे और सेक्स के केंद्र के आस-पास ध्यान को मंडराए, ध्यान को वहां ले जाए और देखे कि वहां क्या हो रहा है, तो वहां शक्ति के कंपन मालूम पड़ेंगे। वे कंपन कहां तक आते हैं? वहीं तक हमारे विकास की अवस्था है। उसके ऊपर तक उन कंपनों को लाना है। उन्हें वहां तक लाना है, जहां मस्तिष्क के आख़िरी छोर तक वे कंपन पहुंच जाते हैं और जहां जीवन की पूरी धारा जग जाती है।
इस सेक्स के केंद्र पर सोई हुई शक्ति का नाम कुंडलिनी है। वह सोई है कुंडल लगा कर जैसे सांप सोया हो। वह जाग जाए तो फन की तरह उठ जाती है ऊपर तक। वे जो देखे होंगे कुछ जैन तीर्थंकरों की मूर्ति पर सांप का फन उठाए हुए, तो आप यह मत सोचना कि वह कोई सांप उनके ऊपर आ गया था या कहानियां गढ़ी हुई हैं कि वे बैठे थे और सांप ने आकर छाया कर दी। वे सब फिजूल की बातें हैं। वे प्रतीक हैं, वे उस शक्ति के प्रतीक हैं, जिसने अपना सारा कुंडल छोड़ दिया और जिसका फन आके पूरा खिल गया, पूरा फूल बन गया, ऊपर जाके प्रकट हो गया है। वह कुंडल मारे हुए शक्ति प्रत्येक के भीतर छिपी हुई है। उसी शक्ति का नाम जीवन-शक्ति है। और हम सबके भीतर वह काम के केंद्र के पास ही सोई पड़ी है, उसके ऊपर नहीं उठ पाती।
और चाहे हम ग्रस्त हो जाएं, और चाहे हम भाग कर संन्यासी हो जाएं, अगर हमारा चित्त काम के आस-पास ही घूमता रहता है, चाहे पक्ष में, चाहे विपक्ष में, तो हमारा केंद्र वहीं बना रहेगा, उसके ऊपर नहीं उठ सकता। उसे ऊपर उठाना एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। उस वैज्ञानिक प्रक्रिया में पहली बात है पहचानना, रिकग्निशन। कहां है? यह मैं आपके ऊपर हाथ रख कर कह सकता हूं कि यहां है। लेकिन मेरे हाथ रख कर कहने का कोई बहुत प्रयोजन नहीं है। यह आपको ही अपने भीतर शांत कभी घड़ी-आधा घड़ी चौबीस घंटे में खोज कर बैठ जाना पड़ेगा कि खोजें कि मेरी जीवन की ऊर्जा कहां है? कहां है मेरे जीवन की ऊर्जा?
आप हैरान होंगे, आज से तीन सौ वर्ष पहले तक यह पता नहीं था कि शरीर में खून चक्कर लगाता है। यही पता था कि खून भरा हुआ है। तीन सौ साल पहले तक, बीस लाख साल से आदमी जमीन पर है, उसे पता नहीं था कि खून चक्कर लगाता है। उस तरफ ध्यान नहीं दिया था, कैसे पता चलता! हम समझते थे खून भरा हुआ है। कहीं से काटो, खून निकल आता है। जैसे किसी बर्तन में पानी भरा हो ऐसे खून भरा हुआ है। यह तो अभी तीन सौ वर्षों में पता चला कि खून चक्कर लगाता है।

कुछ थोड़े से लोगों को पता चला है कि सेक्स की ऊर्जा ऊपर की तरफ भी उठती है। अधिक लोगों को यही पता है कि वह नीचे की तरफ ही जाती है। जिनको यह पता है कि वह नीचे की तरफ ही जाती है, वे एक बात ध्यान में ले लें कि जो चीज भी नीचे जा सकती है, वह चीज ऊपर भी जा सकती है। जो चीज भी नीचे ले जा सकती है, वह ऊपर भी ले जा सकती है। और जितनी दूर तक नीचे ले जा सकती है, उतनी ही दूर तक ऊपर ले जा सकती है।
कभी किसी वृक्ष के पास जाएं। ऊपर वृक्ष दिखाई पड़ता है। जितना वृक्ष ऊपर दिखाई पड़ता है, ध्यान रहे, जड़ें उतनी ही नीचे गई होंगी। और जितनी जिस वृक्ष की जड़ें गहरी जाती हैं, उस वृक्ष का तना उतना ही ऊपर उठ जाता है। जिस वृक्ष को स्वर्ग छूना हो, उस वृक्ष को नीचे पाताल तक जड़ें भेजनी पड़ेंगी। उसके बिना कोई वृक्ष स्वर्ग नहीं छू सकता। लेकिन कोई आदमी कहे कि हम एक ऐसे वृक्ष को जानते हैं, जिसमें ऊपर तो कुछ भी नहीं जाता, जड़ें बस नीचे ही नीचे जाती हैं। हम कहेंगे कि वह आदमी पागल है और या फिर उसे ऊपर के वृक्ष का कोई पता नहीं, क्योंकि ये दोनों चीजें संतुलित होती हैं, ऊपर और नीचे संतुलित है, बीच में केंद्र है। नीचे की तरफ भी यात्रा संभव है, ऊपर की तरफ भी यात्रा संभव है। और जितनी पॉसिबिलिटी है नीचे जाने की, जितनी संभावना है नीचे जाने की, उतनी ही संभावना है ऊपर जाने की। लेकिन बहुत थोड़े लोगों को सेक्स की ऊर्जा के ऊपर जाने का पता चल पाता है।
जब वीर्य की शक्ति ऊपर के मार्ग पर जाने वाली शक्ति बन जाती है, तब उसे
हम ब्रह्मचर्य कहते हैं। ब्रह्मचर्य का अर्थ काम की शक्ति को जबरदस्ती रोक लेना नहीं है। ब्रह्मचर्य का अर्थ हैः काम की शक्ति की ऊर्ध्व यात्रा शुरू हो जाए। वह नीचे न जाए। ऊपर जाने लगे। रोकी भी न जाए, क्योंकि रोकी हुई ऊर्जा ऊपर भी न जाए और नीचे भी न जाए तो मनुष्य को सिर्फ विक्षिप्त कर सकती है, पागल कर सकती है और कुछ भी नहीं कर सकती।
इसलिए जिन्हें ऊपर ले जाने का कोई पता नहीं है, अगर वे रोक लें, जैसा
कि किताबों में लिखा है कि ब्रह्मचर्य ही जीवन है और ब्रह्मचर्य से रहो और यह करो और वह करो। अगर वे रोक लें, तो वे विक्षिप्त होंगे, और कुछ भी नहीं। क्योंकि जो शक्ति न ऊपर जा सके, न नीचे जा सके, बीच में ठहर जाए, तो विस्फोट होगा, वो शक्ति पागल कर देगी। आज जमीन पर जितने लोग पागल हैं, वे किसी न किसी अर्थों में सेक्स की शक्ति के गलत रास्तों पर भटक जाने, विस्फोट हो जाने, विकृत हो जाने, विरूप हो जाने के कारण हैं।
तो तीन संभावनाएं हैं या तो नीचे की तरफ जाएं, जहां पशु की यात्रा चल रही है। या फिर विकृत और विक्षिप्त हो जाएं, जैसा कि सभ्य आदमी के साथ होता चला आ रहा है। और या फिर ऊपर की तरफ उठें। लेकिन ऊपर की तरफ जाने के लिए पहले शक्ति को ठीक से पहचान लेना जरूरी है कि वह कहां है। और जिस शक्ति को बदलना हो, उसे ठीक से समझे बिना कोई नहीं बदल सकता है। उसे ठीक से पहचाने बिना कोई छू भी नहीं सकता है। यह जो आपने देखा होगा, हम सारे लोग कपड़े पहने हुए हैं। और आपको शायद पता भी नहीं होगा कि जंगल से जंगल में, घने से घने जंगल में, आदिम से आदिम आदमी भी और चाहे कहीं कपड़ा न पहने, सिर्फ सेक्स केंद्र पर, सिर्फ काम-केंद्र पर एक पत्ता ही बांध ले। कभी आपने सोचा कि और चाहे पूरा शरीर नंगा हो काम के केंद्र पर एक पत्ता ही बांध लेने का भाव क्यों पैदा होता है?
शायद आपको ख्याल में भी नहीं आया होगा। काम के केंद्र पर इतनी शक्ति इकट्ठी है कि अगर दूसरे व्यक्ति की आंखें भी उस पर पड़ें, तो वे उसे विचलित करती हैं और कंपित करती हैं।
यह तो अभी नवीनतम खोज है कि पदार्थ भी ऑब्जर्वेशन से अपना व्यवहार बदलता है। अगर हम बहुत बड़ी दूरबीनों से भागते हुए छोटे-छोटे एटम और इलेक्ट्रॉन को देखने की कोशिश करें, तो वे जैसे बिना देखे हुए भाग रहे थे, वैसे ही देखते हुए नहीं भागते हैं। जब हम उन्हें देखने की कोशिश करें, तो उनकी गति में अंतर हो जाता है, परिवर्तन हो जाता है।
जैसे समझ लें कि रास्ते पर एक आदमी जा रहा है अकेला, कोई भी नहीं है रास्ते पर। अचानक उसे पता चलता है कि पीछे कोई आ रहा है और देख रहा है। समझ लें आप ही हैं, आप अकेले जा रहे हैं, जब आप अकेले होते हैं रास्ते पर, तब आप और तरह से चलते हैं। तब आप दूसरे तरह के आदमी होते हैं। फिर एक आदमी पीछे

से आ गया, उसके पैरों की चाप सुनाई पड़ने लगी। आप फिर वही नहीं रह जाते जो आप अकेले थे। आप फौरन बदल जाते हैं। आपके भीतर कोई सटल डिफरेंस, कोई बहुत सूक्ष्म सा अंतर हो जाता है। आप दूसरे आदमी हो गए। आप सम्हल गए। आप अब उसी तरह से नहीं चल रहे जैसे चल रहे थे, आप उसी तरह से नहीं गुनगुना रहे जैसे गुनगुना रहे थे। आपके पैर संभल गए, आप बदल गए। आप सभ्य आदमी हो गए, आप सरल आदमी नहीं रहे।
आप बाथरूम में स्नान कर रहे हैं, आप आईने के सामने मुंह चिढ़ा रहे हैं, नंगे खड़े होके नाच रहे हैं। और आपको पता चल जाए कि छोटे से की-होल से कोई देख रहा है। आप फौरन बदल गए। सिर्फ पता चल गया कि कोई देख रहा है, आप बदल गए। ऑब्जर्वेशन इतनी मुश्किल पैदा कर देता है, आप दूसरे हो जाते हैं!
यह बहुत पहले अनुभव में आ गया कि सेक्स-केंद्र पर इतनी शक्ति इकट्ठी
है कि दूसरे की आंख अगर पड़े, तो उसे सक्रिय करती है। उसे सक्रिय करती है, उसे बदलाहट करती है। अगर प्रेम करने वाले की आंख पड़ जाए, तो उसे ऊपर की तरफ ले जाती है; अगर घृणा करने वाले की आंख पड़ जाए, तो उसे नीचे की तरफ ले जाती है। इसलिए हम प्रेम करने वाले के सामने नग्न हो सकते हैं। सिर्फ इसलिए और कोई कारण नहीं है। जिससे हम प्रेम करते हैं, उसके सामने बिल्कुल नग्न हो सकते हैं। उससे कोई डर नहीं है। क्यों? कौन सा डर नहीं है? उससे हम सारे पर्दे अलग कर देते हैं, सारे वस्त्र अलग कर देते हैं। क्यों? उससे कोई भय नहीं है, उसकी प्रेम से भरी हुई आंख, उसका प्रेम से भरा हुआ निरीक्षण उन शक्तियों को ऊपर ले जाने वाला बनता है। यह बहुत पहले ख्याल में आ गया होगा, इसलिए उस केंद्र को ढांक कर छिपाने की बात पैदा हो गई।
आपने देखा होगा साधु-संन्यासियों को, जो नंगे बैठे हुए हैं, लेकिन सारे शरीर पर राख लगाए हुए हैं। अब जब नंगे बैठे हो, तो राख किसलिए लगाए हुए हो? राख लगाए हुए हैं कि वह जो शक्तियों का काम चल रहा है भीतर, उस पर नजर न पड़े। उसको रोका जा रहा है। आपने देखा होगा कि मंदिरों में जाने वाले लोग तिलक लगा कर आ जाते हैं। उन्हें कुछ भी पता नहीं कि वे क्यों लगा रहे हैं। उन्हें कुछ भी पता नहीं कि ये तिलक लगाना सिर्फ उनके लगाने के लिए सार्थक है, जिनके आज्ञा-चक्र तक सेक्स की एनर्जी आ गई हो। और यहां वह दिखाई न पड़े किसी को इसलिए उसके ऊपर चंदन लगा लेना है, ताकि वह पीछे छिप जाए, वह नजर में न आए। कोई आंख उस पर न पड़े। अन्यथा वह बहुत उत्ताप पैदा कर देगी, घबड़ाहट पैदा कर देगी, मुश्किल पैदा कर देगी। अब तो कोई भी लगा रहा है, जिसे कुछ पता नहीं है। जिंदगी बहुत अजीब हो गई है। यहां सब चीजें गलत लोगों के हाथ में चली गई हैं। जिनका अब कोई हिसाब-ठिकाना नहीं है कि यह क्या हो रहा है। किसलिए आप तिलक लगा कर चले आ रहे हैं! एक आदमी जल्दी से मंदिर में गया है, लगा कर चला आ रहा है। उसे पता ही नहीं कि जिस तिजोरी में वह ताला लगा रहा है, उसके पिता इसलिए लगाते थे कि उसमें कुछ था। आपकी तिजोरी में कुछ नहीं है, सिर्फ पिता ताला लगाते थे, आप भी ताला लगा रहे हैं और बड़े प्रसन्न होकर घर लौट रहे हैं कि मेरे पास कोई खजाना है। तिजोरी में ताला लगाना सार्थक हो सकता है, वह किसी विज्ञान की बात है। अन्यथा व्यर्थ है, अन्यथा कोई प्रयोजन नहीं है।
जिन केंद्रों पर शक्ति काम कर रही है, वे दूसरों की आंखों में न आएं। लेकिन अगर वे प्रेम करने वालों की आंखों में आएं, तो उनको विकास मिलता है। इसलिए साधक मित्रों के बीच अपने केंद्रों को खुला छोड़ सकता है। उनकी आंखें उन केंद्रों में सोई हुई शक्तियों को आगे बढ़ाने में सहयोगी होंगी। आपको शायद पता ही नहीं होगा, अब कहते हैं लोग, अब जाकर वनस्पतिशास्त्रा से पूछें, तो वह कहता है, अगर पौधे को आप प्रेम करें, तो पौधे में ग्रोथ जल्दी होती है। अगर एक माली अपने पौधे को प्रेम करता है, तो पौधे में फूल जल्दी बढ़ेगा बजाय उस माली के, जो कोई प्रेम नहीं करता। अब प्रेम से पौधे का क्या संबंध है? लेकिन प्रेम कुछ अनजानी शक्ति है, कुछ अनजाने विद्युत प्रवाह हैं, कुछ प्राणों से निकलने वाली ऊर्जा, कोई वाइब्रेशंस उस पौधे तक पहुंचाता है, वह पौधा तेजी से बढ़ने लगता है।
एक बच्चे को मां के पास हम पालते हैं। और किसी दूसरी जगह उसे पालें, भोजन दें उसे, अच्छे वस्त्र दें, अच्छा इंतजाम दें, सारी सुविधा दें, जो उसकी गरीब मां कभी नहीं दे सकती। और फिर भी आप पाएंगे कि बच्चे में कुछ कमी

रह गई। कोई एक विटामिन जो मां से आता था, वह नहीं आ पाया। कोई एक विटामिन मां से भी आता है, जिसका अभी कोई कैपसूल नहीं बन सका है। कोई मदर विटामिन। अभी कोई कैपसूल नहीं बन सका। कभी आगे बन सकता है। लेकिन कुछ मां देती है जो इतना सूक्ष्म है कि दवाएं नहीं दे सकतीं। कोई ड्रग नहीं दे सकता। वह मां की गर्मी, उसका निकट होना देता है। उसके निकट होने में वह बच्चा बढ़ने लगता है, कोई चीज उसमें गतिमान होने लगती है।
छोटे-छोटे मित्रों के ग्रुप एक-दूसरे के केंद्र को सजग कर सकते हैं। अगर पचास लोग एक साथ बैठ कर ध्यान करें केंद्र पर, तो उन पचासों लोगों के आस-पास जो बाइब्रेशंस, जो विद्युत वातावरण पैदा होता है, वह प्रत्येक के भीतर तीव्र गति पैदा कर देगा। और अगर यह भीतर सोई हुई कुंडल की शक्ति थोड़ी- थोड़ी पहचान में आने लगे कि कहां है, तो जैसे ही आपको पहचान में आएगी कि कहां है, तो आपके जीवन की पूरी धारा बदल जाएगी, क्योंकि आपको पहली दफा पता चलेगा कि खजाना तो यहां है और मैं कहां खोज रहा हूं! और आपको पहली दफा पता चलेगा कि शक्ति तो यहां है, मैं कहां खोज रहा हूं! और आपको पहली दफा पता चलेगा कि आनंद तो यहां है, मैं कहां खोज रहा हूं! और तब जीवन जैसे एक कनवर्सन हो गया। कनवर्सन का मतलब यह नहीं होता कि कोई हिंदू मुसलमान हो जाए, यह तो बेवकूफी है। इससे क्या मतलब है कि कोई मुसलमान हिंदू हो जाए, कि कोई ईसाई जैन हो जाए, कि कोई जैन ईसाई हो जाए, इसका क्या मतलब है! इससे कोई मतलब नहीं है। कनवर्सन का मतलब है, कोई आदमी बाहर से भीतर हो जाए। वह चाहे हिंदू हो, चाहे मुसलमान हो, चाहे ईसाई हो, चाहे कोई भी हो, चाहे कोई भी न हो, कोई आदमी बाहर से भीतर हो जाए, उसके पूरे आकर्षण का केंद्र बाहर से हट जाए और भीतर पहुंच जाए, वह आदमी कनवर्ट हो गया, वह कनवर्सन हो गया, वह आदमी लौट गया, वह वापस लौट गया। वह वहां पहुंच गया, जहां पहुंचने की यात्रा सार्थक है, जरूरी है, माकूल है। जिज्ञासा करो कि मैं कौन हूं और अपने काम-केंद्र के आस-पास आंख बंद करके खोज करें कि सेंशेशन, शक्ति का कहां स्पंदन हो रहा है। किस जगह मालूम पड़ रहा है कि शक्ति है। वह स्पष्ट मालूम होने लगेगी। जैसे कोई मौन होकर बैठ जाए तो हृदय की धड़कन मालूम होती है। आप दिन-भर काम में लगे रहें, हृदय की धड़कन मालूम नहीं होती। आप मौन हो जाएं, आपको हृदय की धड़कन मालूम होगी।
अगर आप और मौन होकर बैठेंगे और ध्यान वहीं ले जाएंगे, तो आपको बराबर
एक नये तरह का स्पंदन, एक नई वाइब्रेशन से परिचय होगा। जिसका आपको कोई पता नहीं है। एक नई नाड़ी आपको मिलेगी, जीवन की नाड़ी, जहां कोई चीज कंप रही है, कोई कोंपल, कोई अंकुर तड़प रहा है निकलने को, कोई चीज फूट पड़ने को व्याकुल है, कोई झरना टूटना चाहता है, और जब वह वहां मालूम हो, तो उसको रोज-रोज पहचानने की कोशिश करना।
जैसे किसी को कोई खजाना मिल जाए, तो वह रोज जब कोई भी ना हो, तब तिजोरी खोले, खजाने को जाके देखे, तिजोरी बंद करे वापस आ जाए। जैसे किसी के खींसे में एक हीरा रखा हो, वह सबसे बात करता रहे और कभी-कभी हाथ डालकर हीरे को देख ले कि वह है और वापस आ जाए।
फिर ऐसे ही चौबीस घंटे में जब मौका मिल जाए, तब उस स्पंदन के पास चले जाना। वह जहां भीतर केंद्र है। जहां चीजें कंप रही हैं और एक नये जीवन की दिशा में जाने का संघर्ष चल रहा है। जहां कांशियसनेस मनुष्य को पार करने की कोशिश कर रही है, जहां चेतना ट्रांसेंड करना चाहती है, जहां चेतना पशु से ऊपर उठना चाहती है, दीवालें तोड़ कर, घेरे तोड़ कर, ऊपर उठ कर कहीं और जाना चाहती है। उस जगह को पहचान लेना। फिर कुछ भी हो जाए, फिर कोई दुकान पर बैठा हो, बाजार में बैठा हो, लेकिन मौके-बेमौके मौका मिलेगा और वह भीतर चला जाएगा, उस जगह को पहचान कर वापस लौट आएगा और एक लविंग केयर, एक प्रेमपूर्ण हिफाजत पैदा हो जाएगी कि भीतर भी कोई एक जगह कोई एक मंदिर है। और जिस तरह से यह हिफाजत बढ़ेगी, यह ध्यान बढ़ेगा, यह सावधानी बढ़ेगी, वैसे-वैसे बहुत स्पष्ट ज्योति, बहुत स्पष्ट जागती हुई शक्ति का प्रवाह और लहर अनुभव होने लगेगी। वह लहर धीरे-धीरे किस मार्ग से आगे बढ़ सकती है और कैसे पहुंच सकती है वहां, जहां मिलन हो जाता है, जहां उससे मिलन हो जाता है, जिससे मिलने को हमारे प्राण तड़पे हुए हैं, जहां उसको हम पा लेते हैं, जिसे न मालूम कितने जन्मों से हम खोज रहे हैं। जिसे न मालूम कितनी-कितनी यात्राओं में हमने

खोजा और पुकारा और चिल्लाया है और जिसकी कोई झलक नहीं मिली और म.जे की बात है कि वह हमारे पास है।
वैसे ही मैंने सुना है, एक आदमी अपने घोड़े को खोजने निकला और वह जगह-जगह पूछता फिरता था कि मेरा घोड़ा कहां है? मेरा घोड़ा कहां है? वह घोड़े पर सवार था, लेकिन जिससे भी उसने पूछा मेरा घोड़ा कहां है, उसने सोचा, इस घोड़े की बात न होगी, क्योंकि इस घोड़े पर तो यह सवार ही है, कोई दूसरा घोड़ा होगा। उसने कहाः हमने नहीं देखा, इस रास्ते से नहीं निकला। फिर वह दूसरे रास्ते पर जाता और पूछता, घोड़ा कहां है? मेरा घोड़ा कहां है? और जो भी मिलता, वह यह सोचता जिस घोड़े पर यह सवार है, इसकी बात ना होगी, क्योंकि इसकी बात की जरूरत क्या है। और वह आदमी खोजता रहा सारी जमीन पर; लेकिन एक आदमी न मिला, जो उससे कहता कि घोड़ा, घोड़े पर तू सवार है। क्योंकि लोगों ने सोचा, यह तो इस घोड़े पर सवार है ही, यह तो घोड़ा इसे पता ही होगा, लेकिन वह उसी घोड़े को भूल गया था।
असल में वह शराब पी गया था और घोड़े पर सवार हो गया था। अब घोड़ा तेजी से भागता था और वह पूछता था, मेरा घोड़ा कहां है। और घोड़ा उसे ले जाता था नई-नई बस्तियों में। वह पूछता था, मेरा घोड़ा कहां है और दूसरे लोग इसलिए नहीं कहते थे कि यही होगा घोड़ा, क्योंकि जिस पर तुम बैठे हो उसकी बात क्या करनी। वे दूसरे रास्ते बताते थे, उस रास्ते पर और देखो, इस रास्ते पर तो नहीं मिला।
आप धन के रास्ते पर चले जाना, पूछते कि आनंद कहां है। लोग कहेंगे, जो
धन के रास्ते पर गए हैं, वे कहेंगे कि हमें तो नहीं मिला, लेकिन दूसरे रास्ते पर चले जाओ, यश के रास्ते पर शायद वहां मिल जाए। यश के रास्ते पर जाएंगे; वहां लोग मिलेंगे, वे कहेंगेः यहां तो हमें नहीं मिला, ज्ञान के रास्ते पर चले जाओ, शायद वहां मिल जाए। और ऐसे हजार-हजार रास्ते हैं और आदमी भटकता रहता है, भटकता रहता है और हर जिंदगी के बाद फिर भूल जाता है कि भटकन बहुत हो चुकी, फिर नई भटकन शुरू हो जाती है। और बार-बार वही भूल है, बार-बार वही भूल है, बार-बार वही भूल है और धीरे-धीरे हम यह भूल ही जाते हैं कि हम जिसे खोज रहे हैं, कहीं ऐसा तो नहीं है कि वह इसीलिए न मिलता हो कि हम उसी पर सवार हैं। कहीं ऐसा तो नहीं है कि हम वही हैं।
और मैं आपसे कहता हूं कि हम वही हैं, जिसकी खोज, हम जिसे मांग रहे हैं, वही हैं। हम जिसे पुकार रहे हैं, वही हैं। इसलिए हम पुकारते रहें, खोजते रहें, दौड़ते रहें हम उसे कभी नहीं पा सकेंगे। कितनी ही पुकार व्यर्थ जाएगी। कितनी ही दौड़ व्यर्थ जाएगी। उसे जो अगर पाना है, तो पहले इसे ही खोज लेना होगा जो मैं हूं। और इस "जो मैं हूं" की पहली खोज का बिंदु जहां हम अभी हैं, अभी हम परमात्मा पर नहीं हैं, अभी हम राम पर नहीं हैं, अभी हम काम पर हैं, अभी सेक्स हम पर है। वहीं से चलना पड़ेगा। वहीं से खोज करनी पड़ेगी।
तो आज यह दूसरा सूत्र आपको देता हूं। अपने भीतर वह स्पंदित बिंदु खोजें, जहां सब केंद्रित है। चौबीस घंटे उसका स्मरण करें, कहां है वह! और एक दफा दिखाई पड़ने लगेगा, फिर स्मरण भी नहीं करना पड़ेगा।
फिर जैसे स्त्री आती है गांव से पानी भर कर, कुएं की तरफ से, वह अपनी सहेलियों से बात कर रही है, वह घड़े की तरफ ख्याल भी नहीं करती, हाथ भी नहीं लगाती, वह घड़ा सम्हला रहता है। कहीं भीतर कोई चेतना सम्हाले हुए है। सम्हाले हुए है। वह घड़े को हाथ भी न लगाए हुए है। वह दूसरों से बात भी कर रही है, वह जोर से गपशप करती हुई जा रही है।
आप सोचेंगे, इसने घड़े को बिल्कुल छोड़ दिया है, उसने जरा भी नहीं छोड़ा है, पूरी कांशियसनेस, पूरा ध्यान घड़े को पकड़े हुए है। वैसे ही फिर आदमी सब करता रहता है और भीतर पूरा ध्यान उस बिंदु को पकड़े रहता है। और उस बिंदु को जैसे ही कोई ध्यानपूर्वक पकड़ता है, क्रांति शुरू हो जाती है। जैसे ही उस बिंदु को कोई ध्यानपूर्वक पकड़ता है, उसकी ऊपर की यात्रा शुरू हो जाती है, और जैसे ही कोई उस बिंदु की तरफ पीठ करता है, उसकी नीचे की तरफ यात्रा शुरू हो जाती है। सेक्स की नीचे की तरफ यात्रा होती है--अंधकार में, अज्ञान में, अनअवेयर, मूर्च्छित। और सेक्स की ऊपर की तरफ यात्रा होती है--होश में, जागृति में, अवेयरनेस में।

बस यह एक बात उस बिंदु की तरफ होश है या बेहोशी है। अगर बेहोशी है, तो
आप नीचे ही नीचे भटकते चले जाएंगे और अगर होश है, तो ऊपर के पहले द्वार पर आप खड़े हो जाते हैं। आगे की और यात्रा कैसे हो सकती है, वह कल सुबह हम बात करेंगे।
एक छोटी सी कहानी और अपनी बात मैं पूरी कर दूंगा।
एक फकीर के आश्रम के पास से कुछ सौदागर निकलते थे। वे किसी दूर बाजार में अपना सामान बेचने जाते थे। रास्ते में सोचा, अपने ऊंट ठहरा लें, फकीर का आश्रम भी देख लें। सुबह का सूरज था, अभी-अभी किरणें फैली थीं। वे फकीर के आश्रम में पहुंच गए। लेकिन देख कर हैरान हुए।
फकीर का आश्रम तो अजीब था। लोग नाच रहे थे, लोग कूद रहे थे, लोग हंस रहे थे। कोई वीणा बजा रहा था। उनमें से कुछ ने कहा, यह कैसा आश्रम है, यह कैसी साधना है, ये लोग क्या कर रहे हैं? कुछ ने कहा कि ऐसा आश्रम तो हमने कभी भी नहीं देखा। चलो वापस लौट चलें, यह तो धोखा है। यहां आमोद-प्रमोद यह राग-रंग, लेकिन वह फकीर कुछ न बोला, हंसता रहा। उसके शिष्य नाचते रहे, वे सौदागर चले गए।
फिर वर्ष भर बाद वापस लौटते थे वे सौदागर। उन्होंने सोचा कि चलो अब फिर उस आश्रम पर नजर डालते हुए चलें कि वहां क्या हाल है। आश्रम के पास आए तो वहां बहुत सन्नाटा था। झांक कर भीतर देखा तो सारे लोग जिनको नाचते पाते थे, वे आंखें बंद किए वृक्षों के नीचे जाने कहां खोए हुए थे। उनमें से कुछ ने कहा कि अब कुछ ठीक हुआ, यह कुछ बात समझ में आती है। यह कुछ अच्छा मालूम होता है, वह फष्कीर फिर हंसने लगा। फिर भी कुछ न बोला, वे सौदागर चले गए। फिर तीसरे वर्ष वे फिर व्यापार के लिए निकले हैं। उन्होंने सोचा कि चलो, उस आश्रम को भी देखते चलें। वहां वे गए। पहली बार आए तो नाच-रंग था, दूसरी बार आए तो लोग बिल्कुल मौन बैठे थे, इस बार गए तो वहां घनघोर सन्नाटा था। अंदर झांक कर देखा तो वहां कोई भी न था। सिर्फ गुरु एक झाड़ के नीचे चुपचाप बैठा था। उन्होंने कहा कि अरे, वे सारे शिष्य कहां गए?
उस गुरु ने कहा कि अब तुम्हें मैं कह दूं। तुमने बार-बार पूछा, मैं चुप
रह गया, क्योंकि राह चलने वाले लोगों को सब बातें बतानी संभव नहीं हैं और सब बातें बताने से उनका हित भी नहीं होता और फिर जो राह चलते कुछ भी कह जाता है, वह बहुत बुद्धिमानी का लक्षण भी नहीं देता। फिर भी अब तुम आ गए हो, फिर तीसरी बार, तो मैं तुम्हें कहता हूं। पहली बार मेरे शिष्य वहां थे, जहां सारे मनुष्य हैं और वहीं से यात्रा शुरू हो सकती है, जहां हम हैं। तो मैं उन्हें अगर गंभीर बना कर बिठा देता तो वह गंभीरता झूठी होती, जैसी कि अक्सर गंभीर लोगों की गंभीरता झूठी होती है। भीतर तो वही आदमी बैठा रहता है, वही नाचने-कूदने वाला। ऊपर से वह लांग-फेसेस, चेहरे लंबे बनाए बैठे हैं और भीतर, भीतर वही उछल-कूद चल रही है। उसने कहा कि नहीं मैं तो यात्रा वहां से करवा सकता हूं, जहां आदमी है। वे शिष्य आए थे, वे यहीं थे, इस आमोद-प्रमोद की दुनिया में ही थे। यहीं से शुरू करना जरूरी था। मैंने उन्हें पहले नाचने-गाने के बीच सजग होना सिखाया कि नाचो और गाओ और अपने भीतर सजग हो जाओ कि कौन से बिंदु पर तुम्हारे जीवन का स्पंदन है।
उन्होंने कहाः अच्छा हम तो यह समझे थे कि यह क्या हुल्लड़ मचा हुआ है,
यह कैसा आश्रम है, यह कैसा गुरु है!
वह फष्कीर हंसने लगा, उसने कहा कि इतनी जल्दी निर्णय सिर्फ नासमझ लेते हैं। सच तो यह है कि समझदार दूसरे के बाबत निर्णय ही नहीं लेते। अपने ही बाबत निर्णय लेते हैं। फिर भी, उन्होंने कहा कि दूसरी बार हम आए तो क्या हो गया था। उस गुरु ने कहा कि उन्होंने अपने बिंदु को पहचान लिया था और वह बिंदु इतना रस देने लगा था कि अब नाचना बेमानी हो गया था। अब वह बिंदु इतना संगीत देने लगा कि बाहर का संगीत... वीणा तोड़ दी, छोड़ दी। अब वे भीतर इतने आनंद में चले गए कि उन्होंने कहा कि हम बाहर चुप होना चाहते हैं। कनवर्जन हो गया। हमने कहाः तो अब तुम चुप होना चाहते हो, तो हो जाओ। फिर वे चुप हो गए। जब तुम दूसरी बार निकले थे, तब वे दूसरी हालत में थे।
उन लोगों ने पूछा कि अब वे कहां हैं?
तो उस गुरु ने कहाः बात पूरी हो गई। अब वे वहां पहुंच गए, जहां पहुंचने
के बाद फिर कोई आगे यात्रा नहीं रह जाती। मैंने उन्हें विदा कर दिया। अब

वे जा चुके हैं। अब मैं यहां अकेला हूं। अब मैं फिर प्रतीक्षा कर रहा हूं उन लोगों की, जो नाचते हुए आएं, ताकि मैं उनको शरीर के नाच से अंततः वहां पहुंचा दूं, जहां परमात्मा का नाच है। लेकिन सब यात्रा वहां से होती है, जहां हम हैं।
और हम सब जहां हैं, उसको छुपाना चाहते हैं और जहां नहीं हैं, उसको मानना चाहते हैं। फिर कठिनाई शुरू हो जाती है। और सारी मनुष्य-जाति इस कठिनाई में पड़ी है कि मनुष्य पशु है और मनुष्य अपने को परमात्मा समझ रहा है।
मनुष्य परमात्मा हो सकता है। ध्यान रहे, हो सकता है, है नहीं। और जो मान लेगा कि हूं ही, उसकी यात्रा यहीं टूट गई। मनुष्य पशु है, पशु मान लेने में कष्ट होता है। लेकिन जो सत्य है, उसे मान लेने में कष्ट नहीं होना चाहिए। हम पशु के बिंदु पर खड़े हैं। वहां से यात्रा करनी है और वहां तक पहुंचाना है, जहां परमात्मा है। यह यात्रा कैसे हो सकती है, इसके तीसरे चरण पर कल संध्या आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं।
और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन क्रांति के सूत्र
तीसरा प्रवचन

जीवन ऊर्जा का रूपांतरण

मेरे प्रिय आत्मन्!
मैंने सुना है, एक माली वृद्ध हो गया था। कितना वृद्ध हो गया था, यह उसे खुद भी पता नहीं था, क्योंकि जिंदगी भर जो बीजों को फूल बनाने में लगा रहा हो, उसे अपनी उम्र नापने का मौका नहीं मिलता है।
उम्र का पता सिर्फ उन्हें चलता है, जो सिर्फ उम्र गिनते हैं और कुछ भी नहीं करते हैं। और मैंने सुना है कि मौत कई बार उस माली के पास आकर वापस लौट गई थी, क्योंकि जब भी मौत आई थी, वह अपने काम में इतना लीन था कि उसके काम को तोड़ देने की हिम्मत मौत भी नहीं जुटा पाई।
जिंदगी को तोड़ देने की हिम्मत जुटाना तो बहुत आसान है। किसी सृजन हो रहे काम को बीच में तोड़ देने की हिम्मत जुटाना बहुत मुश्किल है।
वह बहुत बूढ़ा हो गया था। उसने पौधों की जिंदगी के संबंध में बहुत राज जान लिए थे। उसने नये फूल पैदा किए थे। उसने ऐसे फूल पैदा किए थे, जो वर्षों टिकते। उसने पौधों को सम्हालने, ताजा करने, जिंदा करने, लंबे वर्षों तक जीवित रखने की बहुत सी रासायनिक विद्याएं खोज ली थीं।
मृत्यु के पहले उसने अपने जवान बेटों को बहुत समझाने की कोशिश की, कि बता दे कौन सा फूल किस काम आता है। और यह भी बता दे कि सभी रंगीन फूल सार्थक नहीं होते। और यह भी बता दे कि बहुत चमकने वाले पौधे सभी उपयोगी नहीं होते। और ये भी बता दे कि कांटों में भी बहुत से जीवन के रहस्य छुपे हुए हैं, फूलों में ही नहीं। और यह भी बता दे कि जल्दी खिल जाने वाले फूलों पर ही मत रुके रह जाना, क्योंकि जो जल्दी खिलते हैं, वे जल्दी मुरझा भी जाते हैं। बहुत देर तक, मुश्किल से खिलने वाले फूल भी हैं। और यह भी बता दे कि इन पौधों में वे औषधियां भी हैं जो जीवन को अमृत बना सकती हैं। सारी बातें जवान बेटों को बताने की कोशिश की। कब किस पौधे में खाद देना है, कब मत देना, कब कम पानी देना, कब ज्यादा पानी देना, किस मौसम में रक्षा करना, किस मौसम में फिकर मत करना। लेकिन बेटे नहीं समझे।
बेटे कभी भी नहीं समझते हैं। बूढ़ों की भाषा अगर बेटे समझ जाएं, तो दुनिया बहुत बेहतर हो सकती थी। लेकिन बेटों को बूढ़ों की भाषा ना कभी समझ में आई है और ना आज ही आ रही है, और ना ही आगे बहुत उम्मीद बंधती है कि समझ में आ सकती है।
अनुभव की भाषा गैर-अनुभव को समझ में आए भी तो कैसे आए! जो जानते हैं, उनकी भाषा उनकी समझ में आए भी तो कैसे आए, जो नहीं जानते हैं! जो अंधेरे में हों, उन्हें रोशनी की भाषा कैसे समझ में आ सकती है! और जो अभी जिंदगी की धारा में हों, उन्हें मौत के करीब पहुंचने वाले लोगों को जो सत्य दिखाई पड़ते हैं, वे उनकी समझ के बाहर होते हैं।
बेटों ने अनसुनी कर दी। बेटे समझते थे, फूल ऐसे ही खिल जाते हैं। सभी नासमझ यही समझते हैं। फूल ऐसे ही नहीं खिल जाते। पीछे श्रम है, पीछे संकल्प है, पीछे साधना है।
बाप बीमार पड़ गया है। वह अपने मकान में, झोंपड़े में बंद है। वह खिड़की
से झांक कर देखता है फूलों को मुरझाते हुए, पौधों को मरते हुए। उसके बेटे कभी पानी भी डालते हैं, लेकिन जब पानी नहीं डालना होता है, तब डाल देते हैं। और जिन पौधों की हिफाजत करनी है, उनकी उन्होंने फिकर छोड़ दी है। और जिन पौधों में कुछ भी नहीं है, सिर्फचमकते हुए रंगीन फूल लग जाते हैं। वे उन्हीं पौधों पर मरे जा रहे हैं। वह बहुत उन्हें समझाने की कोशिश करता है। लेकिन बेटे इनकार करते हैं और आकर उससे कहते हैं अब तुम चुप रहो। अब तुम्हारी बातें हमें प्रीतिकर नहीं मालूम पड़तीं। हम जो कर सकते हैं, कर रहे हैं। जो प्रीतिकर लगता है, वह हो रहा है।
वह बूढ़ा उन पौधों को मरते देखता है, जिन्हें अपना जीवन सींच कर उसने बड़ा किया था, उन फूलों को कुम्हलाते देखता है, और उन पौधों को बढ़ते देखता है, घास-पात को, जिनका कोई उपयोग नहीं है, कोई अर्थ नहीं है।

उस बूढ़े की जो हालत होगी, अगर परमात्मा कहीं भी है, तो आदमी की बगिया
को देख कर उसकी वही हालत हो रही होगी। आदमी की जिंदगी में जो महत्वपूर्ण है, उसे खोया जाता देखा जाता है। जो गैर-महत्वपूर्ण है, वह जोर से बढ़ता दिखाई पड़ता है। जो पौधे बिल्कुल व्यर्थ हैं, उन्होंने बहुत बड़ी-बड़ी जमीन घेर ली है, और जो सार्थक हैं, वे खोते गए हैं, सिकुड़ते गए हैं, जंगल में दब गए हैं और मर गए हैं।
आदमी के साथ क्या किया जाए कि जीवन के फूलों को खिलाने का रहस्य उसे फिर से स्पष्ट हो सके। दो सूत्रों के संबंध में मैंने दो दिनों में बात की है, आज तीसरे सूत्र के संबंध में बात करना चाहता हूं।
पहले दिन मैंने कहा, एक शाश्वत जिज्ञासा चाहिए। एक न मरने वाली खोज चाहिए। एक ऐसी आकांक्षा चाहिए, जो वहां न ठहरने दे, जहां हम ठहर गए हैं। अज्ञात की तरफ उठाती रहे, अनंत की तरफ बुलाती रहे। दूर जो नहीं दिखाई पड़ता है, वह भी आकर्षण बना रहे। जो नहीं पाया गया है, जो हाथ से बहुत दूर है, वे उत्तुंग शिखर भी आत्मा को निमंत्रण देते रहें और हमारे पैरों की तरफ बढ़ते रहें।
ऐसी एक खोज जीवन में चाहिए। जिसके जीवन में खोज नहीं है, वह एक मरा हुआ डबरा है, जो सड़ेगा, नष्ट होगा, लेकिन सागर तक नहीं पहुंच सकता। सागर तक तो केवल वे सरिताएं ही पहुंचती हैं, जो रोज अनजान रास्तों से खोजती ही खोजती अनजान, अपरिचित सागर को तलाशती ही तलाशती चली जाती हैं। एक दिन वे वहां पहुंच जाती हैं, जहां पहुंचने पर सागर मिल जाता है। जहां पहुंचने पर वह मिल जाता है, जिसके मिल जाने के बाद और कुछ मिल जाने की कामना नहीं रह जाती।
जीवन एक सरिता की भांति जिज्ञासा की खोज होनी चाहिए, यह पहले सूत्र
में मैंने कहा। दूसरे सूत्र में मैंने कहा कि यह खोज का केंद्र कहां हो। यह खोज कहां केंद्रित हो। हमारे इस व्यक्तित्व में वह कहां है जगह, जहां ऊर्जा छिपी है, जहां शक्ति छिपी है, जहां वह आग छिपी है, जिसको हम जगाएं और दीया जहां वेोत छिपे हैं शक्तियों के, जिन्हें हम उठाएं और ऊपर की ओर ले जाएं। अगर हम ना उठाएं शक्तियों को ऊपर की तरफ, तो भी शक्तियां बहेंगी, लेकिन तब वे नीचे की तरफ बहेंगी।
नीचे की तरफ बहाव प्रकृति का नियम है। और जो आदमी कुछ भी नहीं करेगा,
वह भी नीचे की तरफ बहेगा। ऊपर की तरफ उठना प्रकृति के ऊपर उठना है, परमात्मा की तरफ उठना है। वह नियम से नहीं होता, नियम को तोड़ने से, नियम के प्रतिकूल जाने से होता है। वह नियम से उलटे जाने से होता है।
दूसरे सूत्र में मैंने कहा, कहां, किस केंद्र पर, काम के केंद्र पर हमारी ऊर्जा इकट्ठी है वह नीचे बहेगी और बह जाएगी, अगर हम उसे ऊपर ले जाने में समर्थ नहीं होते। लेकिन हम समर्थ हो सकते हैं। यदि हम उस स्पंदन के केंद्र का ध्यान करें, मेडिटेट करें और हमारी चेतना को ले जाएं उस केंद्र पर और खोजें कि कहां है वह जगह, जहां जीवन हमारे भीतर कुंडली मार कर बैठा हुआ है। जहां जीवन में शक्ति हमारे भीतर छिपी है। अगर हम वहां निरीक्षण को, आंख को, बोध को ले जाएं, तो वह शक्ति जाग जाएगी, उठना शुरू हो जाएगी। लेकिन उसके उठने के लिए एक रासायनिक बात समझ लेनी जरूरी है, वह आज तीसरे सूत्र में समझाना चाहता हूं।
जिंदगी एक बहुत बड़ा रासायनिक रहस्य है। एक बहुत बड़ी केमिकल मिस्टरी है। और जो लोग जीवन के रसायन को नहीं समझ पाते, वे लोग जीवन की क्रांति को भी उपलब्ध नहीं हो सकते। जीवन बहुत छोटे-छोटे तत्वों से मिल कर बना है। और हम जो हैं, वह हमारे चारों तरफ से अनंत से आए हुए तत्त्व हमें जोड़ कर बना रहे हैं। और हम जिस भांति व्यवहार कर रहे हैं, उस व्यवहार करने में, जिन तत्वों ने हमें जोड़ा है, उनका हाथ है। अगर बदलाहट की जा सके इस रसायन में, तो दूसरे तरह की यात्रा शुरू हो सकती है। साधारणतः लोहा समुद्र में डूब जाता है, लेकिन थोड़ी सी डिवाइस, थोड़ी सी तरकीब से लोहा नाव बन जाता है। और सागर को पार करा देता है।
कोई चीज हवा से भारी हवा में नहीं उठ सकती। इसलिए हजारों साल तक आदमी
ने चाहा कि उठे लेकिन सपना देखा, उठ नहीं सका। पुष्पक विमानों की कहानियां लिखीं, किताबों में सपने देखे, लेकिन उठ नहीं सका, क्योंकि हवा से भारी चीज

कैसे ऊपर उठे। लेकिन फिर थोड़ी सी तरकीब और हवा से बहुत भारी चीजें ऊपर उठने लगीं और गति करने लगीं।
मनुष्य का व्यक्तित्व भी एक रासायनिक पुंज है और रासायनिक पुंज के साथ वही हालत है, जैसे अगर कोई कहे कि एक पौधे को हम पानी न दें, तो हर्ज क्या है; थोड़ा सा पानी नहीं मिलेगा; तो क्या हर्ज है, लेकिन हमें पता है कि बड़े से बड़ा दरख्त भी थोड़े से पानी के न मिलने पर मर जाएगा। अगर हम कहें कि थोड़ी सी खाद न दी पौधे में, तो हर्ज क्या है। खाद की दुर्गंध डालने से फायदा भी क्या है, लेकिन हमें पता नहीं है, वह खाद की दुर्गंध ही पौधों की नसों से जाकर फूलों की सुगंध बनती है। अगर खाद नहीं डाली गई तो फूल भी नहीं आएं।
मनुष्य के शरीर के साथ, मनुष्य के शरीर-वृक्ष के साथ बहुत नासमझी हो रही है, जिनका हिसाब लगाना मुश्किल है। आदमी खाता गलत है, आदमी पहनता गलत है, आदमी उठता गलत है, आदमी सोता गलत है, आदमी का सब-कुछ गलत है, इसलिए आदमी का उर्ध्वगमन नहीं हो सकता है। यह ऐसा ही है, जैसे दीये को हमने उलटा कर दिया हो, उसका सब तेल बह गया हो। अब उलटे दीये में, बह गए तेल में हम बाती जलाने की कोशिश कर रहे हों और वह ना जलती हो। और कोई हमसे आकर कहे कि पहले दीये को सीधा करो।
आदमी बिल्कुल उलटा है, इसलिए नीचे की तरफ सारी गति होती है, ऊपर की कोई ज्योति नहीं जलती। इन थोड़ी सी मनुष्य की रासायनिक उलटी स्थिति को समझ लेना जरूरी है। कुछ थोड़ी सी बातें जिनसे कि इशारा मिल सके। शायद कभी ख्याल में भी नहीं आया होगा। सारी पृथ्वी पर, सारे जगत में कोई भी पशु मां का दूध तो पीता है, लेकिन इसके बाद दूध कभी नहीं पीता, सिर्फआदमी को छोड़ कर। प्रकृति की व्यवस्था में आदमी अकेला है, मां का दूध छोड़ देने के बाद
भी दूध पिए चला जाता है। और हम कभी सोचते भी नहीं कि कुछ उपद्रव तो नहीं हो रहा है। और भी मजे की बात है कि मां का दूध छोड़ देने के बाद आदमी, आदमी का दूध तो नहीं पीता, जानवरों का दूध पिए चला जाता है। और ध्यान रहे, जब तक आदमी एनिमल फूड पर, जानवर के दूध पर जिंदा है, तब तक आदमी सेक्सुअलिटी से ऊपर नहीं उठ सकता, कामुकता से ऊपर नहीं उठ सकता।
यह आपको शायद कल्पना में भी नहीं होगा कि गाय का जो दूध है, वह सांड के शरीर जैसी सेक्सुअलिटी पैदा करने की ताकत रखता है। वह जो गाय का दूध है, वह एक सांड के शरीर में दौड़ने की ताकष्त रखता है। वह उसके लिए बना है और सांड के व्यक्तित्व में जितनी कामुकता है, गाय का दूध पीने वाले मनुष्य में उतनी ही कामुकता पैदा हो जाए, तो आश्चर्य नहीं है।
भैंस का दूध है या और कोई भी दूध है। दूध को हम समझते हैं कि सबसे ज्यादा सात्विक आहार। दूध सात्विक बन सकता है, लेकिन जब भीतर की कामुकता, जैसे मैंने कल के सूत्र में कहा, ऊपर की तरफ बढ़नी शुरू हो जाए, फिर दूध कोई नुकसान नहीं पहुंचाता।
लेकिन जब तक सेक्स एनर्जी, जब तक वीर्य ओज ऊपर की तरफ गतिमान नहीं हुआ है, तब तक दूध वीर्य को नीचे की तरफ बहाने का अनिवार्य रास्ता बन गया है। सच तो यह है कि मां के स्तन को छोड़ देने के बाद किसी को दूध की कोई जरूरत नहीं है।
हम सोचते हैं, मांस खाना बुरा है; हम सोचते हैं, पशुओं को मारना बुरा है; अंडे खाना बुरा है, लेकिन हम कभी भी नहीं सोचते, दूध क्या है? दूध खून का हिस्सा है। मां के पेट में, किसी भी मादा के पेट में खून को दो हिस्सों में करने की विधि है। खून में दो हिस्से होते हैं। लाल और सफेद। लाल कणों को मादा का यंत्र अलग कर देता है, सफेद कणों को अलग। सफेद कण दूध बन जाते हैं, इसलिए तो दूध पीने से जल्दी खून बढ़ जाता है, दूध खून है।
लेकिन और भी कठिन बात है, यह हम ख्याल भी नहीं करते हैं कि जिस पशु का दूध है, वह उस पशु के व्यक्तित्व के योग्य है। गाय का दूध गाय के बेटे के योग्य है और गाय के बेटे आप नहीं हैं, चाहे शंकराचार्य कितना ही कहें। गाय के बेटे बैल ही हैं और बैल को भी दूध सारे जीवन जरूरी नहीं है।
क्या आपके ख्याल में है कि जब तक बच्चे छोटे हैं और कामुक रूप से परिपक्व नहीं हो गए हैं, तब तक तो दूध किसी तरह उपयोगी हो सकता है, लेकिन जैसे ही सेक्स मैच्योरिटी पूरी हुई, जैसे ही एक व्यक्ति काम के यौन की

दृष्टि से प्रौढ़ हुआ, उसके बाद दूध बहुत खतरनाक है। और सारी मनुष्यता दूध से परेशान और पीड़ित है। यह दूध जिन जानवरों से आता है, उन्हीं तरह की जानवरों की वृत्तियों को मनुष्य के भीतर पैदा करता है।
यह भी ध्यान रहे, दूध अत्यंत अस्वाभाविक आहार है। बस मां का दूध बच्चे
के लिए जब तक प्रकृति की जरूरत है तब तक, उसके बाद अत्यंत अननेचुरल फूड है। और इस अस्वाभाविक आहार से मनुष्य के व्यक्तित्व का पूरा रासायनिक उपद्रव हो गया है। इसलिए दुनिया में पशुओं के भीतर भी काम है, लेकिन कामुकता नहीं है। सेक्स है, सेक्सुअलिटी नहीं है। सेक्सुअलिटी सिर्फआदमी में है। पशुओं के भीतर काम तो है, वे बच्चे तो पैदा करते हैं, और काम से प्रभावित भी होते हैं। लेकिन न तो काम के आधार को लेकर दिन-रात सोचते हैं, न फिल्में बनाते हैं, न संगीत रचते हैं, न साहित्य बनाते हैं, न कविता रचते हैं, इसके बाद वे कोई फिकर नहीं करते।
आदमी चौबीस घंटे में जितना काम करता है, उसमें अट्ठानबे प्रतिशत किसी
न किसी रूप से काम-केंद्रित होता है। वह दो प्रतिशत भी और बहुत गहरे खोजेंगे, तो इसी कामवासना से संबंधित मिल जाएगा। आदमी को क्या हो गया! आदमी विक्षिप्त हो गया है और आदमी की विक्षिप्तता में उसके व्यक्तित्व का पूरा का पूरा रासायनिक विघटन हो गया है।
हमने मांसाहार के लिए मना किया है। लोग सोचते हैं कि शायद महावीर या बुद्ध जैसे लोगों ने मांसाहार के लिए इसलिए मना किया होगा कि मांसाहार में हिंसा होती है। तो उन्हें सच्ची बात का पता नहीं है। महावीर और बुद्ध ने हिंसा के कारण मांसाहार के लिए इनकार नहीं किया है। और जो लोग ऐसा समझ रहे हैं और इस तरह का प्रचार कर रहे हैं, वह प्रचार एकदम नासमझी से भरा हुआ है। उन्हें महावीर और बुद्ध के आंतरिक विज्ञान का कोई भी पता नहीं है। महावीर और बुद्ध मांसाहार से सिर्फ इसलिए इनकार कर रहे हैं कि जिस जानवर का मांस है, उस मांसाहार के करने के बाद उस जानवर की प्रवृत्तियां उस मनुष्य में प्रविष्ट होती हैं। और वह मनुष्य उसी तल का हो जाता है, जिस जानवर का मांस खाता है। सवाल महत्वपूर्ण यह नहीं है कि जानवर की हिंसा पैदा हो गई है। बहुत महत्वपूर्ण यह है कि मांस खाने वाला अपनी आत्मा को नीचे की तरफ ले जाता है, ऊपर की तरफ नहीं।
यह मैंने अभी मजाक में कहा कि चाहे कितना ही गऊ माता कहे कोई, गऊ माता कहने से आदमी गऊ का बेटा नहीं हो जाता, लेकिन इस संबंध में थोड़ी सी बात और भी जान लेनी जरूरी है और वह यह कि एक अर्थ में गऊ माता है, लेकिन उन अर्थों में नहीं जिन अर्थों में हिंदुस्तान के नासमझ गऊ भक्त गऊ माता की चर्चा कर रहे हैं। वे समझाते हैं कि चूंकि गऊ से दूध मिलता है, इसलिए वह मां है। वे समझाते हैं कि गऊ से बछड़े मिलते हैं, खेती-बाड़ी होती है, इसलिए मां है। ये सब बेमानी बातें हैं। उन्हें कुछ पता नहीं है। गऊ माता और दूसरे ही अर्थों में है।
डार्विन ने जिस अर्थ में बंदर को पिता कहा है, गऊ उस अर्थ में मां है। डार्विन और पश्चिम का पूरा विज्ञान यह खोज कर रहा था कि आदमी का शरीर कहां से आया है। आदमी की बॉडिली हेरिडिटी क्या है? आदमी का शरीर कैसे विकसित हुआ है? तो शरीर के विकास को खोजते-खोजते उनको पता चला कि आदमी का शरीर बंदर के शरीर की कड़ी के बाद की कड़ी है। आदमी का शरीर बंदर से आया है। यह बिल्कुल सच है कि आदमी का शरीर बंदर से आया है।
लेकिन हिंदुस्तान में कभी किसी को यह बात नहीं सूझी कि आदमी का शरीर बंदर से आया है और हिंदुस्तान में मनुष्य के विकास पर हजारों वर्षों से लोग सोच रहे हैं क्या कारण है। एक कारण है और वह यह कि हिंदुस्तान ने बॉडिली हेरिडिटी की कोई फिकर ही नहीं की। हिंदुस्तान कहता है कि शरीर कहां से आया है, यह महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण यह है कि आत्मा कहां से आई है और हिंदुस्तान के खोजी जब आत्मा की खोज में गए, तो उन्होंने पाया कि आत्मा की, आदमी की आत्मा की पहली कड़ी गाय से आई है। आदमी की आत्मा का विकास तो गाय की परंपरा से हुआ है। आदमी के शरीर का विकास बंदर की परंपरा से हुआ है। और आदमी के पास बंदर का शरीर है और गाय की आत्मा।
जैसे एक लोहार लोहे की कुल्हाड़ी और एक बढ़ई उसके लिए एक डंडा बनाए और दोनों मिल कर कुल्हाड़ी बन जाए। एक तरफ से प्रकृति शरीर को विकसित करती आ

रही है बंदर की तरफ से। और बंदर की यात्रा में सबसे श्रेष्ठ शरीर विकसित हो सका है और एक तरफ से आत्मा का विकास चल रहा है और गाय की आत्मा की यात्रा में सबसे श्रेष्ठ आत्मा विकसित हो सकी है और इन दोनों के मिलन से आदमी विकसित हुआ है। आदमी बहुत सी विकास की यात्राओं का संगम-स्थल है। शरीर कहीं और से आया है, आत्मा कहीं और से आई है। इसलिए हिंदुस्तान ने बंदर की कोई फिकर नहीं की और पश्चिम गाय की अभी बहुत वर्षों तक फिकर नहीं कर पाएगा। उसे पता नहीं चल सकता कि आत्मा का भी एक जीनिसिस, आत्मा का भी एकशृंखलाबद्ध इतिहास है। इन अर्थों में गऊ माता हैं, इन अर्थों में नहीं कि आप सदैव उसका दूध पीते रहें।
अपनी माता का भी सदा दूध पीने की चेष्टा करेंगे, तो माता भी अदालत में मुकदमा चला देगी। दूध मनुष्य के व्यक्तित्व को कामुक बनाने में केंद्रीय तत्त्व है और अगर मनुष्य के भोजन से, दूध से, मुक्ति नहीं मिलती, तो बहुत खतरा है। हां, यह मैं जानता हूं कि अगर वीर्य की ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन शुरू हो जाए, तो दूध का उपयोग किया जा सकता है। इसलिए ऋषियों, मुनियों और योगियों ने अगर दूध को परम आहार कहा हो, तो गलत नहीं कहा है। लेकिन वह उस यात्रा के प्रारंभ हो जाने के बाद, उस यात्रा के प्रारंभ होने के पहले नहीं।
मनुष्य के रासायनिक व्यक्तित्व में फलों, सब्जियों का ही मौलिक स्थान है। क्यों? क्योंकि फल, सब्जी, हरी चीजें, ये सेक्स के पैदा होने के पहले विकास की अवस्थाएं हैं। फलों का, सब्जियों का पैदा होना सेक्सुअल प्रोडक्शन नहीं है। वह कामुक उत्पत्ति नहीं है। जैसे ही पशुओं की दुनिया शुरू होती है, कामुक उत्पत्ति शुरू हो जाती है। इसलिए पशुओं का मांस या दूध सब बराबर है, सब एनिमल फूड हैं। वह कोई भी मनुष्य की चेतना को ऊपर ले जाने में बाधा बनता है।
आप क्या खाते हैं, उससे आप बनते हैं, उससे आप निर्मित होते हैं। आप नब्बे प्रतिशत तो भोजन हैं। आपने जो ले लिया है, आपके भीतर वही काम कर रहा है। थोड़ी देर शराब पीकर देखें, तो आपको पता चलेगा कि जितनी देर शराब काम कर रही है, उतनी देर आप नहीं हैं, उतनी देर शराब है।
मैंने सुना है, एक सम्राट की सवारी निकलती थी एक रास्ते पर। एक आदमी चौराहे पर खड़े होकर गालियां देने लगा। सारे लोग फूल फेंक रहे थे, वह गालियां फेंकने लगा। उसे उसी क्षण पकड़ कर बंद कर दिया गया। दूसरे दिन उसे सम्राट के सामने लाया गया। और सम्राट ने पूछाः क्या हो गया तुम्हें, गालियां क्यों बक रहे थे कल। उसने काः महाराज अगर ठीक पूछें, तो मैं तो था ही नहीं, शराब थी। मैं तो, मुझे पता ही नहीं। गालियां बकी होंगी, शराब ने बकी होंगी।
हम तो थे ही नहीं। हम तो जब से होश में आए हैं, तब से हम परेशान हैं कि
ये क्या मामला है। हम कारागृह में बंद क्यों हैं? हमें पता है उस समय का, जब हम शराब पीए थे मधुशाला में और होश आया तो पता चला, सींखचों में बंद हैं हम। इस बीच क्या हुआ इसका हमें कोई पता नहीं, अगर इसके संबंध में पूछना हो तो शराब से आप पूछ ले सकते हैं। बीच में हम नहीं थे। थोड़ी देर शराब पीकर आप, आप नहीं रह जाते। शराब सक्रिय हो जाती है।
हम जो ले रहे हैं अपने भीतर, जो हम आहार ले रहे हैं, वह हमारी, सारे व्यक्तित्व की, ज्योति को ऊपर या नीचे ले जाने का कारण बनता है। लेकिन हमें इसका कोई ख्याल ही नहीं। या जो इसकी बहुत बातें करते हैं, वे इतनी नासमझी की बातें करते हैं कि उनकी बातें सुनना भी कठिन मालूम पड़ता है। धीरे-धीरे एक बहुत बड़ा विज्ञान, जो मनुष्य की चेतना को एक रासायनिक सहारा दे, केमिकल डिवाइस बने। सहारा दे कि उसकी चेतना ऊपर उठे। क्योंकि ध्यान रहे कि मनुष्य क्या है, नब्बे प्रतिशत रसायन है और अभी तो निन्यानबे प्रतिशत रसायन है। वह आत्मा तो एक ही प्रतिशत है अभी मुश्किल से। हां, वह सौ प्रतिशत किसी दिन हो सकती है। लेकिन अभी है नहीं और उस पर ध्यान रखना पड़ेगा। और अत्यंत छोटी बातों पर ध्यान रखना पड़ेगा।
तो पहली बात सब्जियों, फलों की दुनिया से आया हुआ भोजन मनुष्य की चेतना को ऊपर उठाने वाला होता है। जानवरों से आया हुआ भोजन मनुष्य की चेतना को नीचे ले जाने वाला होता है। और इसलिए प्रकृति ने बड़ी अदभुत

व्यवस्था की है। क्या आपको पता है, मां के पेट में एक बच्चा होता है।
हालांकि हम यही कहते हैं कि मेरी नसों में मेरे मां-बाप का खून दौड़ रहा है।
यह सरासर झूठ है। किसी की नसों में किसी के मां-बाप का खूनहीं दौड़ता है। प्रकृति ने एक अदभुत व्यवस्था की हुई है। मां के पेट में जो बच्चा होता है, उसमें मां का खून ही जाता। पेट में बच्चे तक खून पहुंचने के पहले डिसइंटिग्रेट होता है। मां का पूरा का पूरा खून अपने मौलिक तत्वों में टूट जाता है। फिर उन मौलिक तत्त्वों को बच्चा फिर से चुनाव करता है, फिर नया खून निर्माण करता है।
इसलिए यह हो सकता है कि मां को खून की जरूरत हो और बेटे का खून काम न आए। अगर मां का ख़ून बेटे में दौड़ रहा हो, तो मां को खून की जरूरत है, निकालो बेटे का खून और लगा दो। नहीं, खोज-बीन करनी पड़ेगी कि किसका खून इससे मेल खाता है। बेटे का मेल खाए यह जरूरी नहीं है। क्यों?
बेटे ने अपना खून निर्मित किया है। प्रकृति ने व्यवस्था की है कि तुम अपना निर्मित करो, ताकि तुम मुक्त हो सको। और अगर हम दूसरे से निर्मित खून या मांस को ग्रहण कर लें, तो हम कभी मुक्त नहीं हो सकते। हमारा व्यक्तित्व उस दूसरे के जैसा बनना शुरू हो जाएगा। इसलिए प्रकृति ने तो इतना अदभुत इंतजाम किया है कि तुम्हारी मां का व्यक्तित्व भी तुम पर हावी न हो जाए। इसलिए खून को तोड़ कर फिर से पुनर्निर्मित करना होता है।
किसी के खून में मां और बाप का खून नहीं दौड़ रहा है, यह ध्यान रखना। अपना ही खून दौड़ रहा है। और एक-एक आदमी का खून अपने-अपने ढंग का है। सबका खून एक जैसा नहीं है।
अगर मेरे पैर पर चोट आ जाए और मेरे पैर का ऑपरेशन करना पड़े, तो आपके पैर की चमड़ी को निकालकर उसी जगह लगाए, तो वह नहीं लगेगी। बड़ी मुश्किल बात है, चमड़ी को क्या पता है कि किसकी है। आपकी चमड़ी है, उसी पैर से, उसी जगह से निकाली गई जहां मेरे पैर में चोट है, उसको काट कर लगा दें, वह नहीं जुड़ेगी, वह इनकार कर देगी। यह पूरा शरीर ही इनकार कर देगा कि इसे हम स्वीकार नहीं करते। क्यों? चमड़ी को क्या पता हो सकता है कि चमड़ी किसकी है। क्या चमड़ी की भी कोई इंडिविजुएलिटी है, कोई व्यक्तित्व है। निश्चित है, आपके ही दूसरे पैर की चमड़ी निकाल कर लगाइएगा, वह लग जाएगी। और दूसरे के पैर की चमड़ी लगने से इनकार कर देगी। आपका शरीर उसे इनकार कर देगा। वह फॉरेन है, वह विजातीय है, वह अंगीकार नहीं हो सकती।
अगर यह बात सच है कि खुद की चमड़ी ही खुद के शरीर पर लग सकती है, दूसरे
की चमड़ी लगानी मुश्किल है, तो हम तैयार भोजन को जहां से भी स्वीकार कर रहे हैं, जानवरों से हम अपने व्यक्तित्व में डिसइंटिग्रेशन पैदा कर रहे हैं, एक खतरा पैदा कर रहे हैं। हमारे व्यक्तित्व में कई तल हो जाएंगे। हमारा व्यक्तित्व एक नहीं रह जाएगा। इसलिए वहां से भोजन चाहिए, जहां से सीधा भोजन मिलता है, और जहां से सीधा भोजन अवशोषित होता है, और आपके व्यक्तित्व के योग्य आप चुनते हैं। और आपका व्यक्तित्व एक हार्मनी, संगीतपूर्ण व्यवस्था बनता है; जिसे आपके व्यक्तित्व ने अपने लिए चुना है। और वह अपने ढंग का बनता है। तब उस व्यक्तित्व की ज्योति ऊपर की तरफ जानी शुरू होती है।
पहली तो हालात यह है कि हम इतने जानवरों से सम्ंबंधित हो गए हैं कि हमारे भीतर कई तरह के जानवरों की आवाजें हैं। और कई बार आपको समझ में नहीं आएगा, एक आदमी को आप क्रोध में ला दें और जब वह आपके ऊपर टूटेगा, तो आपको विश्वास नहीं होगा कि यह आदमी मेरे ऊपर टूट रहा है या जानवर मेरे ऊपर टूट रहा है।
क्रोध में आदमी के भीतर न मालूम कैसे जानवर प्रकट होने शुरू हो जाते हैं। दंगा-फसाद हो जाए और आप देखें कि आदमी में भेड़िए निकल आएंगे, कुत्ते निकल आएंगे, शेर निकल आएंगे, आदमी नहीं निकलेगा। आदमी भीतर है ही नहीं। आदमी सिर्फ ऊपर है। जरा खोल फाड़ दो, स्कीन-डीप है आदमी, बिल्कुल चमड़ी की मोटाई से भी कम पतला, फाड़ दो जरा और भीतर से जो निकलेगा, तो कई तरह के जानवर निकल सकते हैं, आदमी नहीं निकलेगा। भीतर आदमी है ही नहीं। हम आदमी को निर्मित नहीं कर रहे हैं। और आदमी को कैसे निर्मित किया जाए, क्योंकि आदमी इस पूरे विकास की अंतिम कड़ी है, फिलहाल उसके आगे कड़ियां होंगी, लेकिन आदमी

पर कहीं विकास रुक गया है। आदमी को बहुत स्मरणपूर्वक अपने व्यक्तित्व को ऊपर ले जाने वाले सारे तत्वों से इस शरीर को निर्मित करना चाहिए।
आहार का मतलब सिर्फभोजन नहीं है, यह भी ध्यान रहे। आहार का मतलब हैः
जो भी भीतर लिया जाए। आहार का मतलब सिर्फ भोजन नहीं है, भोजन भी एक आहार है। आंख से मैं जो भीतर ले जाता हूं, वह भी आहार है। और कान से जो भीतर ले जाता हूं, वह भी आहार है। और हाथ के स्पर्श से जो भीतर ले जाता हूं, वह भी आहार है। आहार का मतलब इंद्रियों से जो भीतर जाए और मेरे व्यक्तित्व को बनाए। इसलिए आहार का मतलब सिर्फभोजन मत समझ लेना। भोजन एक प्रकार का आहार है; और भी आहार हैं।
जब मैं रास्ते पर चलते लोगों को देखता हूं, तब भी मैं भोजन कर रहा हूं, आंख के द्वारा। तब मैं जो देख रहा हूं, वह मेरे व्यक्तित्व को बना रहा है। आप क्या देख रहे हैं?
क्या आपको पता है, अगर एक आदमी को एक ऐसे मकान में रखा जाए, जहां सब चीजें लाल हैं, तो उस आदमी का मस्तिष्क चक्कर खाने लगेगा। और अगर उसी आदमी को एक ऐसे मकान में रखा जाए, जहां सब ची.जें हरी हैं, तो उसी आदमी का मस्तिष्क शांत हो जाएगा, क्योंकि हरे रंग का आहार व्यक्तित्व को शान्त करता है और लाल रंग का आहार व्यक्तित्व को उद्विग्न करता है।
आप क्या देख रहे हैं, रासायनिक काम जारी है। एक-एक रंग आपके भीतर जाकर कुछ कर रहा है। आप क्या देख रहे हैं? आप कहां देख रहे हैं? आप किसको देख रहे हैं? आप जो देख रहे हैं, उससे आप निर्मित हो रहे हैं। आप क्या सुन रहे हैं, एक-एक आवाज आपके भीतर की वीणा पर चोट कर रही है, आपको रूपांतरित कर रही है। आप कुछ भी सुन रहे हैं। आप कुछ भी पढ़ रहे हैं, कुछ भी खा रहे हैं, आप कुछ भी देख रहे हैं। फिर यह चेतना में क्रांति नहीं हो सकती। यह क्रांति एक अत्यंत सुव्यवस्थित योजना का परिणाम हो सकती है।
देख कर हैरानी होती है, आदमी जो देखता है, जो सुनता है, बहुत हैरानी होती है। अगर कुछ ठीक देखने को न हो तो आंख बंद करना बहुत बुरा तो नहीं है। लेकिन आंख बंद करने को कोई भी राजी नहीं है, गलत देखने को कोई भी राजी है, आंख बंद करने को कोई भी राजी नहीं है। कान बंद कर लेना बुरा तो नहीं है, गलत सुनने की बजाय। लेकिन सुनने की इतनी तीव्र आकांक्षा है कि कुछ भी सुनने को हम राजी हैं, कुछ भी। और तब हमारे भीतर सब तरह का कचरा इकट्ठा होता चला जाता है।
आदमी सुबह उठता है, और पहली बात पूछता है, अखबार कहां है? उसने कचरा इकट्ठा करना शुरू कर दिया। उसने नीचे के रास्ते पर जाने की खोज-बीन शुरू कर दी है। अखबार में क्या पढ़ता है वह? खबार में वह सब पढ़ जाता है, पहले कोने से लेकर आखिरी तक। जिसमें नब्बे प्रतिशत दंगा-फसाद, झगड़े, दुर्घटनाओं की खबरें होती हैं। बेईमानी, डकैतियां, चोरियां, अदालतों की खबरें होती हैं। और समाज में जो सबसे ज्यादा जघन्य अपराधी हैं राजनीतिज्ञ, उनकी खबरें होती हैं, बड़े-बड़े अक्षरों में। और इनको वह पी रहा है। और बिना सोचे पी रहा है, क्योंकि यह उसके व्यक्तित्व को बनाएगी। यह सिर्फ केजुअल है, यह सिर्फ सामान्य बात नहीं है कि आपने अखबार देख लिया और फेंक दिया। अखबार तो आपने फेंक दिया, अखबार तो रद्दी में बिक जाएगा, लेकिन अखबार जो आपके भीतर डाल गया है वह जन्मों-जन्मों तक आपके भीतर चक्कर लगाएगा। याद रखना, स्मृति में एक बार जो अंकित होता है वह जब तक समाधि उपलब्ध न हो जाए तब तक पोंछा नहीं जा सकता, उससे पहले पुछता ही नहीं। तब तक उसको, फिर आपको बोझ को ढोना ही पड़ेगा।
अनंत-अनंत जन्मों का बोझ हम ढो रहे हैं। न मालूम किस-किस तरह के कचरे
को हमने इकट्ठा किया है।
एक आदमी आता है और वह कहता है कि फलां आदमी ने चोरी की, तो हम इतने रस-विमुग्ध हो जाते हैं कि पच्चीस काम छोड़ कर हम पूछते हैं कि और क्या हुआ, और क्या हुआ? किस आदमी ने चोरी की इससे प्रयोजन! इससे अर्थ! और इस कचरे को अपने भीतर करने की जरूरत! आप बगिया बनाना चाहते हैं, फूल लगाना चाहते हैं जिंदगी के, और यह कचरा इकट्ठा करेंगे और ये कंकड़-पत्थर लाएंगे घर में, यह घास-पात इकट्ठा करेंगे और फिर अगर सुंदर बगिया बनाने का ख्याल है, तो फिर ये नहीं हो सकता।

एक माली की तरह सजग, चुनाव करने वाला बनना पड़ेगा और देखना पड़ेगा क्या मैं अपने भीतर ले जाता हूं। तो पहली बात है, हम क्या अपने भीतर ले जा रहे हैं। चाहे अपने भोजन की शक्ल में, चाहे शब्दों की शक्ल में। शब्द भी भोजन हैं।
अभी कंप्यूटर बने हैं सारी दुनिया में, तो उसको जो ज्ञान देते हैं, उसको आप जानते हैं, उसको वे क्या कहते हैं, फीड, भोजन करवाना। उसको फीड कर रहे हैं कंप्यूटर में। हम भी सब अपने कंप्यूटरों को फीड कर रहे हैं। चौबीस घंटे भोजन दे रहे हैं, अखबार से, किताब से, किसी से भी।
प्रति सप्ताह पांच हजार नई किताबें छप कर बाहर आ जाती हैं। इस जमाने में आदमी की जितनी भूख है जानने की, उतनी कभी नहीं थी। लेकिन जितना अज्ञानी आज आदमी है, शायद कभी नहीं रहा होगा। इतना बड़ा अंबार लग रहा है किताबों का। पांच हजार किताबें हर सप्ताह जमीन पर नई बढ़ जाती हैं। मास्को और वाशिंगटन के लाइब्रेरियनों के सामने सवाल खड़ा हो गया है कि अगर इसी रफ्तार से किताबें बढ़ती रहीं, तो इस सदी के पूरे होने-होने तक, किताबों को रखने की जगह नहीं रह जाएगी। कहां रखेंगे किताबों को! तो फिर छोटी किताबें बनाने का उपाय होना चाहिए। जिनको दूरबीन से, खुर्दबीन से पढ़ा जा सके। या फिर माइक्रो फिल्म की किताबें बनानी चाहिए, जिनको पर्दे पर पढ़ा जा सके, क्योंकि इतनी किताबें रखेंगे कहां। आज मास्को या लंदन की लाइब्रेरी में इतनी किताबें हैं कि अगर उनकी अलमारियों को एक के बाद एक रखा जाए, तो जमीन के तीन चक्कर लगा लेंगी।
यह सारा बढ़ता हुआ अम्बार और आदमी की इतनी ज्ञान की लालसा कि वह सुबह
से शाम तक जानने को उत्सुक है, अखबार से, रेडियो से, टेलीविजन से, जो मिल जाए उससे, नेताओं से, गुरुओं से, साधुओं से, संन्यासियों से सबसे जानने को उत्सुक है। इतना जानने के लिए हम इकट्ठा करते चले जा रहे हैं। और आदमी के ज्ञान का कोई पता नहीं चलता। ज्ञान का दीया जलता हुआ दिखाई नहीं पड़ता। आदमी बुझ गया बिल्कुल, ज्ञान बिल्कुल नहीं है, और ज्ञान का ढेर लगा है। .जरूर कहीं कोई गड़बड़ हो रही है।
हम कुछ कचरा इकट्ठा करते हुए मालूम पड़ रहे हैं। हम कोई चुनाव नहीं कर रहे हैं। जैसे कोई आदमी कुछ भी खाना शुरू कर दे। पत्थर, कंकड़, जो मिल जाए, खा ले। तो खाए तो बहुत, लेकिन मरने भी लगे और लोग कहेंः भोजन तो बहुत करता है, लेकिन मरता क्यों है, बीमार क्यों पड़ता है। आदमी कुछ भी भीतर डाल रहा है और एक-एक चीज का मूल्य है। एक छोटा सा शब्द अगर आपके भीतर गलत चला जाए, तो आपके सारे व्यक्तित्व को डांवाडोल करता है। एक छोटा सा शब्द, एक जरा सा शब्द।
आप रास्ते पर चले जा रहे हैं और एक आदमी मिल जाए और कह दे, यह आदमी बड़ा मूर्ख है। अब एक मूर्ख, एक छोटा सा शब्द है। जो सिर्फ एक ध्वनि है। जो आदमी हिंदी न जानता हो, सुन लेगा कि मूर्ख कहा गया और मजे से चला जाएगा, उसे कुछ पता नहीं चलेगा। लेकिन आप जानते हैं, आपकी रात हराम हो गई। अब आप करवटें बदल रहे हैं, वह एक छोटा सा मूर्ख नाम का शब्द भीतर घुस गया है। वह आपको करवटें दिलवा रहा है, माथे पर पसीना छूट रहा है। आप उठते हैं, बैठते हैं, सिर धोते हैं। लेकिन वह मूर्ख शब्द चक्कर लगा रहा है। वह कहता है कि उस आदमी ने कहा, मूर्ख।
एक छोटा सा शब्द और भीतर जाकर इतने आंदोलन खड़ा कर रहा है, इतनी तरंगें पैदा कर रहा है, तो हमने तो न मालूम कितने कचरे इकट्ठे कर रखे हैं। और उस सारे कचरे को इकट्ठा करके हम ऊपर जाने की यात्रा का विचार कर रहे हैं। हमने गलत सुना है, गलत खाया है, गलत पहने हुए हैं। कोई आदमी नहीं पूछता कि हम जो पहने हुए हैं, वह किसलिए पहने हुए हैं, क्या कर रहे हैं।
कभी आपने सोचा, जब भी युग ज्यादा कामुक होता है, तो कपड़े चुस्त हो जाते हैं। और जब भी युग आध्यात्मिक होता है, कपड़े ढीले हो जाते हैं। कभी आपने सोचा! अचानक यह हो जाता है। यह आकस्मिक नहीं है, यह एक्सीडेंटल नहीं है, इसके पीछे कारण हैं।
जितने शरीर पर चुस्त कपड़े होंगे, उतना आदमी तना हुआ होगा। इसलिए युद्ध के मैदान में चुस्त कपड़े बहुत जरूरी हैं। युद्ध के मैदान पर चुस्त कपड़े बिल्कुल जरूरी हैं, क्योंकि युद्ध के मैदान पर आदमी से हमें ऐसी

नालायकियां करवानी हैं कि उसका शांत होना खतरनाक हो सकता है। उसको तनाव में होना चाहिए। वह इतने तनाव में होना चाहिए कि पूरे वक्त अपने कपड़ों की वजह से उनको बाहर छलांग लगाने का मन होता रहे। कूदा-कूदा रहे उसका मन कि कब इन कपड़ों से बाहर निकल जाऊं। वह इतने क्रोध में रहे अपने होने से ही, खिंचा हुआ रहे, भागा हुआ रहे।
कभी आपने देखा, अगर आप चुस्त कपड़े पहने हुए हैं, तो एक ही साथ दो-दो सीढ़ियां चढ़ जाएंगे। ढीले कपड़े पहने हुए आदमी को आपने दो-दो सीढ़ियां एक साथ चढ़ते हुए नहीं देखा होगा। ढीले कपड़े वाला आदमी एक शान, एक डिग्निटी, एक गरिमा से एक-एक कदम चढ़ेगा। इसलिए पुराने मकानों में नौकरों की सीढ़ियां अलग होती थीं, मालिकों की सीढ़ियां अलग होती थीं। नौकरों के कपड़े चुस्त होते थे। उनके लिए लंबी सीढ़ियां बनाई जाती थीं, वे छलांग लगा कर चढ़ें। मालिक के कपड़े ढीले होते थे, दूर तक लटकते होते थे। शायद दो नौकर उसे पकड़ कर चलते थे। उसकी सीढ़ियां छोटी होती थीं। वे आहिस्ता एक-एक कष्दम उठाते थे।
दुनिया में किन्हीं भी साधुओं के कपड़े कभी भी चुस्त नहीं हुए। कुछ बात है! और बात यह है कि शरीर को आप जितना कसेंगे, उतना नीचे की तरफ प्रवृत्ति होगी। शरीर को जितना रिलैक्स छोड़ेंगे, मुक्त, उतना ऊपर की तरफ उठाव होगा।
यह मैं छोटी-छोटी बातें कह रहा हूं, सिर्फ उदाहरण के लिए, कि इस शरीर
की पूरी की पूरी कैमिस्ट्री आपके ख्याल में सिर्फ आ जाए। इशारा। फिर पूरी बात तो आपको अपनी व्यवस्था देनी होगी, लेकिन इशारा आपके ख्याल में आ जाए कि क्या-क्या हम करें कि वह जो भीतर ध्यान लगाना है उस केंद्र पर ऊर्जा के, उस ध्यान में ये सारी बातें सहयोगी हो सकती हैं।
अब एक आदमी कैसे भी कपड़े पहने हुए है, कैसे भी रंग के कपड़े पहने हुए है। कितनी ही रंग-बिरंगा एक साथ उसने कपड़े पर पट्टियां लगा रखी हैं। और कोई भी नहीं पूछता कि इस आदमी को क्या हो गया है! क्योंकि बहुत रंग-बिरंगी पट्टियों वाले कपड़े, पट्टे वाले कपड़े यह खबर दिलाते हैं कि आदमी का मस्तिष्क भीतर अशांत है। शांत आदमी एक लम्बे विस्तार वाले रंग को पसन्द करेगा।
कभी आपने आकाश देखा है? जब एकदम नीला आकाश होता है पूरा, कोई भेद नहीं होता है, एक अभेद रंग होता है। कभी आंख खोल कर आधा घंटा लेट गए हैं रेत पर, और देखा है उस नीले आकाश को। उस नीले आकाश को देखते-देखते ही आप पाएंगे कि आप भी उस आकाश के साथ एक हो गए हैं। कुछ भीतर शांत हो गया है। लेकिन सोचें, आकाश में हमने रंग-बिरंगी पट्टियां लगा दीं। हजारों रंग-बिरंगी पट्टियां लगा दीं आकाश में, उसको देखें आध घंटे तक। पागल होकर घर लौटेंगे, पता लगाना मुश्किल हो जाएगा अपना घर कहां है, हम कौन हैं! सारी दुनिया पागल हुई जा रही है। एक मैड-हाउस बनाया हुआ है। सब तरह से पागल हुई जा रही है, क्योंकि जो भी हम कर रहे हैं, वह सब उत्तेजित कर रहा है, शांत नहीं कर रहा है। पहाड़ों पर जाकर आपको अच्छा क्यों लगता है, पहाड़ों में क्या है? सिर्फहरियाली है और कुछ भी नहीं। वह दूर तक फैला हुआ हरे रंग का एक विस्तार, भीतर कुछ शांत कर जाता है। भीतर कोई प्रतिध्वनि गूंज जाती है हमारे। असल में हमारे शरीर का भी पूरा व्यक्तित्व इन्हीं हरी वनस्पतियों से बना है। एक इनर हार्मनी है वह बाहर जो वृक्ष है, उसमें और हमारे भीतर। और जब हम हरे वृक्षों के करीब पहुंचते हैं, तो हमारे भीतर उन वृक्षों की जो परिणतियां हैं, वे कंपित होती हैं, और एक मेल हो जाता है, एक मिलाप हो जाता है। आदमी के बनाए हुए किसी मकान के पास जाकर ऐसा नहीं होता है।
न्यूयार्क में या चंडीगढ़ में, या बम्बई के बड़े मकानों के पास पहुंच कर, थोड़ी देर खड़े रहें, तो उदासी आएगी, ता.जगी नहीं। आदमी के बनाए हुए सारे के सारे सीमेंट, कंक्रीट और पत्थर के मकान, आपके प्राणों में किसी प्रतिध्वनि को नहीं छेड़ते। लेकिन एक वृक्ष के पास, एक पुराने वृक्ष के पास, जिसकी हरी शाखाएं फैली हैं आकाश में, उसके पास आप चुपचाप बैठ जाते हैं, तो कुछ हो जाता है।
मैंने एक कहानी सुनी है। मैंने सुना है कि मजनू से लैला का पिता बहुत
डर गया, घबड़ा गया और लैला को लेकर भाग गया उस गांव से दूसरे गांव। ये बाप

नाम के जो प्राणी हैं, ये प्रेम से हमेशा ही घबड़ाते रहे हैं। और उन्होंने दुनिया में प्रेम की दुनिया नहीं बसने दी, नहीं बनने दी। वह भाग गया। मजनू को पता लगा, वह लैला की तलाश में गया। गांव-गांव खोजते उसे पता चला कि इस रास्ते से वह काफिला निकलने वाला है, जिसमें लैला और उसका बाप है। वह उस काफिले के रास्ते पर किनारे एक झाड़ के पास टिक कर खड़ा हो गया। बरगद का एक वृक्ष है, बड़ का। और दूर घना जंगल फैला हुआ है, उस वृक्ष से लगा हुआ। वह उस बड़ के वृक्ष से टिक कर खड़ा हो गया। कम से कम देख लूंगा। ऊंट पर बैठी हुई लैला उसे दिखाई पड़ी। उस लैला ने हाथ से इशारा किया कि घबड़ाओ मत, मैं जल्दी ही लौट कर आऊंगी।
वह तो काफिला आगे चला गया। पिता की मौजूदगी में वह बोल भी ना सकी, बस सिर्फ हाथ से इशारा किया। वह मजनू वहीं टिका खड़ा है। और वह प्रतीक्षा करता है कि लैला अब आएगी, अब आएगी, अब आएगी। दिन बीता, रात बीती, सप्ताह बीता। गांव के लोगों ने आकर कहाः पागल हो गए हो इस झाड़ के पास क्यों खड़े हो? उसने कहाः जाओ, उसने बोला भी नहीं, हाथ से कहा जाओ, क्योंकि उसे डर है
कि वह एक क्षण के लिए कहीं जाए और उसी बीच कहीं काफिला गुजरे और लैला निकल जाए। और वह पाए कि मजनू को मैं कह गई थी राह देखना और वह नहीं है यहां मौजूद। क्या सोचेगी और वह नहीं हटा, नहीं हटा। महीने बीत गए। कहते हैं वर्ष बीत गए, कहते हैं बारह वर्ष बीत गए। कहानी है। वह नहीं हटा। धीरे-धीरे खड़े-खड़े उस वृक्ष से उसका शरीर जुड़ गया, और वृक्ष को दया आ गई। और जैसे वह अपनी शाखाओं में रस भेजता था, ऐसे ही जुड़ कर उसने मजनू के हाथ-पैर में भी रस भेजना शुरू कर दिया। फिर मजनू के हाथ-पैर पर पत्ते निकल आए, फिर शाखाएं निकल गईं और जड़ों ने ढक लिया और मजनू उस वृक्ष के साथ एक हो गया। कभी-कभी अंधेरे में, कभी रात, कभी सुबह, कभी एकांत में बस इतना होता था, उस जंगल में एक आवाज गूंज जातीः लैला! लैला! गांव के लोग डरने लगे। रात वहां से निकलने में डरने लगे और ख्याल हुआ कि शायद मजनू मर गया है और उसका भूत हो गया है और वह जंगल में चिल्लाता फिरता है।
बारह वर्ष बाद लैला लौटी। उसने गांव के लोगों से पूछा कि मजनू कहां है। उन्होंने कहाः कुछ दिनों तक वह उसी वृक्ष के नीचे खड़ा दिखाई पड़ा था, फिर हमें कुछ पता नहीं वह कहां गया। लेकिन रात में जरूर आवाज जंगल में सुनाई पड़ती है। वह लैला रात गई। वहां आवाज आईः लैला! वह खोजती हुई उसी वृक्ष के पास पहुंची। चारों तरफ घूमती, उसे मजनू कहीं दिखाई नहीं पड़ता। और फिर वह पूछतीः मजनू तुम कहां हो? मजनू कहताः मैं यहीं हूं, मैं तो सदा से यही हूं, मैं तो बारह वर्षों से यहीं हूं। वह सब तरफ हाथ से टटोलती है। वह मजनू तो वृक्ष हो गया है, उसमें से पत्ते निकल आए हैं। और वह रोती है और चिल्लाती है। वह कहती है: तुम कैसे पागल हो, तुम यहां क्यों रुक गए, तुम कैसे पागल हो, तुम यहां क्यों ठहरे रहे इतनी देर तक? वह मजनू कहता हैः मैं धन्य हो गया, दो बातों से, तुम मिली सो तो मिली। इस वृक्ष के नीचे, निकट रह कर मैं वृक्ष से जुड़ गया और वृक्ष से क्या जुड़ा परमात्मा से भी जुड़ गया। आदमी से जब तक जुड़ा था परमात्मा से टूट गया था। और जब से इस वृक्ष से जुड़ गया हूं, तब से परमात्मा से जुड़ गया हूं।
वह जो पहाड़ पर वृक्षों में, समुद्र की लहरों में, सरिताओं में वह जो कोई चीज आकर्षित करती है और हम शान्त हो जाते हैं, वह क्या है? वह हमारे भीतर छुपी हुई किसी प्रतिध्वनि का मेल है, बाहर के किसी सत्य से, वे दोनों मिल गए हैं। थोड़ी देर को हम खो गए हैं। लेकिन आदमी का बनाया हुआ सब गलत है। आदमी का बनाया हुआ सब परमात्मा के उलटा मालूम पड़ता है। और हम उससे घिर गए हैं, कपड़े में भी उससे घिर गए हैं, मकानों में भी उससे घिर गए हैं, भोजन में भी उससे घिर गए हैं, किताबों में, अखबारों में भी उससे घिर गए हैं। और इस सबने हमारे पूरे व्यक्तित्व की जो केमिस्ट्री है, हमारे पूरे व्यक्तित्व के रसायन को एकदम ही विघ्न, उत्पात से भर दिया है।
मनुष्य एक उजड़ी हुई बगिया हो गई है। वहां घास उग रही है, जहां फूल उगने थे। और जहां अमृत की औषधि पैदा होती, वहां सिवाय झाड़-झंकाड़ के कुछ भी पैदा नहीं होता। जब पानी पड़ना चाहिए तब पानी नहीं पड़ता है। जब पानी नहीं पड़ना चाहिए, तब पानी बरसा देते हैं। जहां खाद चाहिए, वहां खाद नहीं है। जहां खाद नहीं चाहिए, वहां हमने खाद के ढेर लगा दिए हैं। अब ऐसी हालत में अगर

परमात्मा कहीं होगा और अपनी खिड़की से झांकता होगा, तो क्या सोचता होगा? उसकी समझ के बाहर हो जाता होगा कि ये क्या है।
लेकिन यह बदला जा सकता है। कुछ लोग सदा इसे बदलने की कोशिश करते रहे हैं। और कुछ सूत्र कभी नहीं खोए हैं। वे आज भी मौजूद हैं और जो भी समझने को राजी हों, उन्हें वे सूत्र स्पष्ट हो सकते हैं। वे अपने पूरे व्यक्तित्व को बदल सकते हैं।
आज तीसरे सूत्र में मैं आपसे यह कहता हूं, यह ध्यान रख कर जीने की कोशिश करना कि जो ऊपर ले जाता हो वही मैं करूंगा, वही सुनूंगा; जो ऊपर ले जाता हो वही पहनूंगा। जो ऊपर ले जाता हो उसी से मिलूंगा। जो ऊपर ले जाता हो उसी को देखूंगा। जो ऊपर ले जाता हो जीवन को... अगर साधना बनाना है तो सब तरफ से हमला करना पड़ेगा, सब तरफ से ऊंचाई की तरफ चोट करनी पड़ेगी। अगर वीणा भी सुनना तो वही जो ऊपर ले जाती हो। अगर दृश्य भी देखना हो तो वही जो ऊपर ले जाता हो। अगर किसी से गले भी मिलना हो तो उससे ही जो ऊपर ले जाता हो। अगर किन्हीं चरणों पर सिर भी रखना तो उसी के ही जो ऊपर ले जाता हो।
पैसे के चरणों पर सिर रखे जा रहे हैं, राजनीतिज्ञों के चरणों पर सिर रखे जा रहे हैं, जो नीचे ले जाएगा और नरक पहुंचाएगा। पता है आपको अब नरक में अगर जाओगे भी तो मिलने के लिए जगह मिलना बहुत मुश्किल है। क्योंकि इतने राजनीतिज्ञ सब; जिनको आप कहते हैं स्वर्गीय हो गए, वे कोई स्वर्गीय नहीं होते। वे सब नरक में पहुंचते चले जा रहे हैं। वहां एकदम भीड़-भड़क्का हो गया है। वहां जगह खोजनी मुश्किल है।
झुकना भी तो वहां, जो ऊपर ले जाए। वहां मत झुकना, जहां नीचे जाना हो। ऐसे झुकने से तो टूट जाना बेहतर है, जो नीचे ले जाता हो। ऐसे भोजन से भूखा मर जाना बेहतर है, जो नीचे ले जाता हो। ऐसे कपड़ों से नंगे खड़े होना बेहतर है, जो नीचे ले जाते हैं। ऐसे साथ से अकेला होना बेहतर है, जो नीचे ले जाता हो। ऐसी रोशनी की क्या जरूरत, जो अनं करती हो! ऐसे से तो अंधेरा बेहतर है, जहां आंख तो हम आसानी से खोल सकते हैं। ये विचार करना जरूरी है। एक-एक इंच जिंदगी के, एक-एक पहलू पर, सुबह से सांझ तक, जागते और सोते भी, जो सत्य की साधना में लगता है, जीवन की क्रांति के, वह न केवल दिन का विचार करता है, वह रात के सपनों तक की जांच करता है कि ये सपने देखने के कि ये नहीं देखने के। ये सपने मैं देखूंगा तो नीचे जाऊंगा कि ऊंचा जाऊंगा। वह अपने सपनों तक की जांच-परख रखता है।
हमारे तो जागरण का, होश का भी ठिकाना नहीं है, सपनों का क्या ठिकाना।
वह सपनों के लिए भी रोता है कि यह सपना क्यों आया? वह सपनों को भी बदलने की कोशिश करता है कि ये सपने नहीं आने देंगे, बदलेंगे इन्हें। सपने भी वही देखेंगे जो ऊपर ले जाए; श्वास भी वही लेंगे जो ऊपर ले जाए; खून में भी वही दौड़ाएंगे जो ऊपर ले जाए।
अगर जिंदगी इस तरह एक सामूहिक उपक्रम बन जाए ऊपर जाने का, तो कोई कारण नहीं है कि कोई भी मनुष्य परमात्मा क्यों नहीं हो सकता। प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा है, लेकिन छुपा हुआ। अप्रकट। प्रत्येक व्यक्ति परमात्मा है, लेकिन संभावना है, सत्य नहीं। संभावना सत्य बन सकती है। वह जो पॉसिबिलिटी है, वह जो पोटेंशियलिटी है, वह जो बीज रूप है, जो प्रकट हो सकता है, और जो आदमी उसे बिना प्रकट किए मर जाता है उस आदमी ने एक अवसर खो दिया। और ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता है।
ये थोड़ी सी बातें तीन दिनों में मैंने कहीं। इस संबंध में जो भी प्रश्न हो, सिर्फ इन तीन दिन की बातों के ही संबंध में, और फिजूल की बातों के संबंध में प्रश्न लिख कर मत भेज देना, मैं उनका जवाब नहीं दूंगा। इन तीन दिनों में जो बातें मैंने कहीं, उस संबंध में जो भी प्रश्न हों, उनके उत्तर कल संध्या तक आपको दूंगा।

मेरी बातों को इतने शांति और प्रेम से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं
और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

जीवन क्रांति के सूत्र
चौथा प्रवचन

झूठी प्यासों से मुक्ति

मेरे प्रिय आत्मन्!
तीन दिन की चर्चाओं के संबंध में बहुत से प्रश्न मित्रों ने पूछे हैं। उन सब प्रश्नों के जो सार प्रश्न हैं, उन पर मैं विचार करूंगा।
एक मित्र ने पूछा है कि क्या तर्क के सहारे ही सत्य को नहीं पाया जा सकता है?
तर्क अपने आप में तो बिल्कुल व्यर्थ है, अपने आप में बिल्कुल ही व्यर्थ है। तर्क अपने आप में बूढ़े हो गए बच्चों का खेल है, उससे ज्यादा नहीं। हां, तर्क के साथ प्रयोग मिल जाए, तो विज्ञान का जन्म हो जाता है। और तर्क के साथ योग मिल जाए, तो धर्म का जन्म हो जाता है। तर्क अपने आप में शून्य की भांति है। शून्य का अपने में कोई मूल्य नहीं है। एक के ऊपर रख दें, तो दस बन जाता है, नौ के बराबर मूल्य हो जाता है। अपने में कोई भी मूल्य नहीं, अंक पर बैठ कर मूल्यवान हो जाता है। तर्क का अपने में कोई मूल्य नहीं। प्रयोग के ऊपर बैठ जाए तो विज्ञान बन जाता है, योग के ऊपर बैठ जाए, तो धर्म बन जाता है। अपने आप में कोरा खोल है, शब्दों का जाल है। मैंने सुना है, एक बहुत बड़े महानगर में एक आदमी ने गांव में आकर विज्ञापन करवाया। डूंडी पिटवाई। एक ऐसा घोड़ा प्रदर्शित किया जाएगा आज संध्या, जैसा घोड़ा न कभी हुआ और न कभी देखा गया है। उस घोड़े की खूबी यह है कि घोड़े का मुंह वहां है, जहां उसकी पूंछ होनी चाहिए पूंछ वहां है, जहां उसका मुंह होना चाहिए। सारे लोग उस गांव के उस भवन की तरफ टूट पड़े, जहां सांझ उस घोड़े का प्रदर्शन था। महंगी टिकटें थीं, वे उन्होंने खरीदीं। अगर आप भी उस गांव में रहे होंगे, तो जरूर उस भवन में गए होंगे। गांव में कोई समझदार आदमी बचा ही नहीं, जो उस घोड़े को देखने न गया हो।
भीड़ बाहर-भीतर, और घोड़े की तीव्र प्रतीक्षा और वह आदमी बार-बार मंच पर आकर कहने लगा कि थोड़ा सा ठहर जाएं, थोड़ा ठहर जाएं, फिर सांस लेने को भी जगह न रही। और लोग चिल्लाने लगे कि अब जल्दी करो! और जब पर्दा उठा, तो सामने एक साधारण घोड़ा खड़ा था। एक क्षण तो सब चौंक कर रह गए। घोड़ा बिल्कुल साधारण था। गौर से देखा, फिर लोग चिल्लाए कि धोखा है यह! यह घोड़ा तो बिल्कुल साधारण है।
उस आदमी ने कहाः ठीक से देखो। जो मैंने कहा था, वह बात पूरी है। घोड़े
के मुंह में जो तोगड़ा बांधा जाता है, वह घोड़े की पूंछ में बांधा हुआ था। और उस आदमी ने कहा कि देख लो, मैंने जो खबर की थी, वह यह थी कि घोड़े का मुंह वहां है, जहां पूंछ होनी चाहिए, और पूंछ वहां है जहां मुंह होना चाहिए। तोगड़े में पूंछ थी, जहां मुंह होना चाहिए था। और उसने कहा कि अगर तुम तर्क को थोड़ा भी समझते हो, तो चुपचाप वापस लौट जाओ।
उस भवन से लोगों को चुपचाप पैसे खोकर वापस लौट आना पड़ा। तर्क सही था, लेकिन तर्क बस इतना ही कर सकता है कि जहां घोड़े का मुंह हो वहां पूंछ डाल दे। जहां पूंछ हो, वहां मुंह डाल दे, तोगड़ा बदल दे। इससे ज्यादा तर्क कुछ भी नहीं कर सकता है।
और तर्क के साथ मजा यह है कि तर्क ऐसी तलवार है, जिसमें दोनों तरफ धार है। वह एक तरफ ही नहीं काटती, वह दोनों तरफ काटती है। इसलिए ऐसा कोई तर्क नहीं जो तर्क से नहीं कट जाता हो। इसलिए जो आस्तिक तर्क देकर ईश्वर को सिद्ध करते हैं, वे आस्तिक तर्क से ईश्वर को असिद्ध करवा देते हैं। जिन आस्तिकों ने ईश्वर के लिए तर्क दिया है, उन्होंने वे नास्तिक पैदा किए, जिन्होंने ईश्वर को खंडित किया है। नास्तिक उन आस्तिकों ने पैदा किए हैं, जिन्होंने ईश्वर के लिए तर्क दिया है।
दुनिया में जिस दिन तर्क देने वाले आस्तिक विदा हो जाएंगे, उसी दिन तर्क देने वाले नास्तिक समाप्त हो जाएंगे। जब तक दुनिया में आस्तिक हैं, तब तक नास्तिक नहीं मर सकता, क्योंकि नास्तिक आस्तिक के तर्क का उत्तर है और अगर दुनिया को धार्मिक बनना है, तो आस्तिकों को मर जाना चाहिए। ताकि

नास्तिक समाप्त हो जाएं। दुनिया उस दिन धार्मिक होगी, जिस दिन ईश्वर के लिए, सत्य के लिए तर्क देना नासमझी ज्ञात होगी।
आस्तिक एक तरह का नासमझ है जो ईश्वर के लिए तर्क देता है और सिद्ध करना चाहता है। ईश्वर के लिए तर्क देकर सिद्ध करने का मतलब यह है कि हम ईश्वर से बड़े हैं, जो ईश्वर को सिद्ध करते हैं। अगर हम सिद्ध न करेंगे, तो वह असिद्ध हो जाएगा। अगर हम सिद्ध न कर पाएंगे, तो वह मरा ईश्वर, हारा ईश्वर गया।
ईश्वर को सिद्ध होना न होना हमारी मुट्ठी की बात है। आस्तिक यह कहता
है कि हम ईश्वर को सिद्ध करके रहेंगे। आस्तिक ईश्वर से बड़े होने का दावा करता है। नास्तिक क्रोध से भर जाता है और वह भी कहता है, हम असिद्ध करके रहेंगे। आस्तिक और नास्तिक, दोनों ईश्वर के दुश्मन हैं। जो भी सत्य के लिए तर्क भर देता है, वह सदा सत्य का दुश्मन है।
सत्य का तर्क से कम संबंध, अनुभव से ज्यादा है। अगर अनुभव को ही कोई तर्क कहे तो बात दूसरी है। अन्यथा अनुभव एक और ही दिशा है।
ये जो पूछते हैं कि क्या तर्क से ही सत्य नहीं मिल सकता? उन्हें मैं कहना चाहूंगा, तर्क से सत्य मिलना तो दूर है, असत्य तक का मिलना मुश्किल है। सत्य तो हवा में मुट्ठियां बांधने जैसा है। तर्क तो हवा में मुट्ठियां बांधने जैसा है, जितनी जोर से मुट्ठी बांधेंगे, हवा और बाहर निकल जाएगी। अगर हवा चाहते हो मुट्ठियों में, तो मुट्ठी खुली रखना। अब यह उलटी बात है, अगर हवा चाहते हो मुट्ठी में, तो मुट्ठी खुली रखना। और अगर हवा पर मुट्ठी बांधने की कोशिश की, जितनी सख्त मुट्ठी होगी, उतनी कम हवा भीतर होगी। अगर मुट्ठी पूरी सख्त होगी, हवा बिल्कुल नहीं होगी।
जो तर्क बांधने की कोशिश करता है सत्य पर, उसकी मुट्ठी से सत्य खिसक जाता है। असल में तर्क का क्या अर्थ है? तर्क का अर्थ है कि मनुष्य की बुद्धि एक सीमा खींचती है कि यह सत्य है। मनुष्य की बुद्धि जो सीमा खींचती है, वह सीमा कितनी बड़ी हो सकती है? कितने मूल्य की हो सकती है?
कल रात कुछ मित्रों से मैं एक बात कर रहा था। एक गांव में एक बहुत बुद्धिमान फकीर था, उसकी बात कर रहा था। उस गांव के सम्राट ने यह घोषणा की, कि मैं अपने राज्य से असत्य का अंत करना चाहता हूं। और जो असत्य बोलेगा, उसे मैं सूली पर लटका दूंगा। लेकिन गांव के लोगों ने कहाः गांव में एक फकीर है, बूढ़ा। तुम उससे तो पूछ लो कि यह हो भी सकता है कि नहीं। यह आज तक नहीं हुआ। आज तक कोई असत्य को बंद नहीं कर पाया, आज तक कोई असत्य को रोक नहीं पाया, क्योंकि आज तक कोई यही तय नहीं कर पाया कि सत्य क्या है और असत्य क्या है।
उस फकीर को बुलाया और सम्राट ने कहाः आप आशीर्वाद दें कि मेरी योजना सफल हो, मैं अपने राज्य में असत्य को समाप्त करना चाहता हूं। फकीर ने गौर से ऊपर आंख उठा कर देखा। और उस राजा से कहा, कैसे करोगे असत्य को समाप्त? उसने कहा: फांसी की सजा दूंगा, जो असत्य बोलता हुआ पकड़ा जाएगा।
कल नया वर्ष शुरू हो रहा है और कल सुबह मैं एक झूठ बोलने वाले को पकड़ कर, जो दरबार है नगर का, द्वार है, उस द्वार पर लटका दूंगा, ताकि सारा गांव देख ले और सारा गांव जान ले। उस फकीर ने कहाः तो फिर मैं बात नहीं करूंगा। कल सुबह दरवाजे पर मैं मिलूंगा। आप दरवा.जे पर ही मिलिएगा। राजा ने कहाः तुम्हारा मतलब? उसने कहा, दरवाजे पर मैं पहला आदमी रहूंगा, वहीं आपसे बातचीत होगी। अभी यहां बात नहीं हो सकती। राजा बहुत चकित हुआ। दूसरे दिन शीघ्र दरवाजे पर पहुंच गया। दरवाजा खुला, तो फकीर भीतर आ रहा था। गधे पर सवार। राजा ने पूछाः आप और गधे पर, कहां जा रहे हैं। फकीर ने कहाः सूली पर चढ़ने जा रहा हूं। उस राजा ने कहाः सूली पर चढ़ने, क्यों झूठ बोलते हैं? आपको भलीभांति पता है कि मैं झूठ बोलने वाले को सूली पर चढ़वा दूंगा। उस फकीर ने कहः तो मैंने झूठ बोला है, सूली पर चढ़वा दो, लेकिन ध्यान रखना अगर वह सूली पर चढ़वाया तो जो मैंने बोला था, वह सच हो जाएगा। और अगर तुमने सूली पर नहीं चढ़ाया, तो एक झूठ बोलने वाला आदमी झूठ बोल कर निकल गया और तुमने सूली नहीं लगाई। अब बोलो, तुम क्या करते हो। उस राजा ने कहाः यह तो मुश्किल हो गई। अगर मैं तुम्हें छोड़ दूं, तो तुम झूठ बोलने वाले हो और बचते हो। और अगर मैं

मार डालूं, तो तुम सच हो जाओगे और मैंने एक सच बोलने वाले को सूली दे दी। अब मैं क्या करूं।
उस फकीर ने कहाः तुम सोचो। जब सोच लो तो मुझे बताना, इसके बाद कानून शुरू करना। सुनते हैं, वह राजा कई वर्ष जीया और मर गया। फिर उस फकीर को नहीं बुलाया। उससे यह तय नहीं हो सका कि वह क्या करे। उसे सूली दे कि न दे। फिर उसने यह बात ही छोड़ दी कि सत्य और असत्य का निर्णय कर लेना।
आदमी तर्क के द्वारा करता क्या है, एक सीमा खींचना चाहता है, एक डिस्कशन बनाना चाहता है। यह सत्य है, यह असत्य है। पहले हम यह पूछ लें कि बुद्धि की यह सामर्थ्य है कि वह सत्य और असत्य का निर्णय करे। यह कैसे हमने मान लिया कि बुद्धि तय कर लेगी कि क्या सत्य है, क्या असत्य। यह हमने कैसे जान लिया।
बुद्धि बहुत काम चलाऊ है, उससे यह चरम निर्णय कैसे हो सकते हैं और बुद्धि सोच सकती है, जान नहीं सकती। इस बात को ठीक से समझ लेना जरूरी है। बुद्धि सोच सकती है, जान नहीं सकती। बुद्धि थिंक कर सकती है, वह जो नोइंग है, वह जो जानना है, वह बुद्धि नहीं कर सकती। जानने का उपकरण मनुष्य का पूरा व्यक्तित्व है। बुद्धि सिर्फ सोच सकती है। और सोचते क्या हैं आप? यह भी आपने कभी सोचा कि आप सोचते क्या हैं? जो आप सोचते हैं, सब उधार सब बासा होता है। आपने खुद कभी कुछ भी नहीं सोचा है। जो सोचा है, वह सब सुना है, कहीं से इकट्ठा किया है, उसी को वापस उगला है। एक भी बात जो आप सोचते हैं और कहते हैं, बोलते हैं, लिखते हैं, वह आती कहां से है? पहले जो भीतर डाली जाती है, फिर वह भीतर से बाहर आती है।
सोचना कभी भी मौलिक नहीं है, ओरिजिनल नहीं है। ओरिजिनल थिंकिंग जैसी कोई चीज ही नहीं होती। सब थिंकिंग बोरोड होती है, सब सोचना उधार और बासा होता है। मौलिक विचारक, हम कहते हैं कि ओरिजिनल थिंकर यह शब्द ही झूठा है। दुनिया में कोई विचारक मौलिक नहीं होता। सब विचारक उधार होते हैं। लेकिन फिर मौलिकता कहां से आती है? मौलिकता विचार से नहीं आती, निर्विचार से आती है। विचार से जो मुक्त हो जाता है, वह मौलिक हो सकता है। लेकिन जो विचार में बंधा है, वह तो हमेशा उधार होता है, बासा होता है। विचार हमेशा दूसरों से मिलते हैं, विचार हम इकट्ठे करते हैं। हां, हम इतना कर सकते हैं कि दस विचारों की टांग-सिर तोड़-ताड़ कर एक नया विचार खड़ा कर लें और दुनिया को लगे यह नया विचार हो गया। यह नया विचार नहीं है। जैसे आप चाहें, तो आप ऐसा सपना देख सकते हैं कि मैं एक सोने का उड़ता हुआ घोड़ा देख रहा हूं। सोने का उड़ता हुआ घोड़ा किसी ने भी नहीं देखा। यह बड़ा मौलिक विचार है। घोड़े लोगों ने देखे हैं, उड़ते हुए पक्षी देखे हैं, सोना देखा है। लेकिन इन तीनों चीजों की, टांगों को तोड़ कर एक उड़ता हुआ सोने का घोड़ा बना लेते हैं। यह कोई मौलिक विचार न हुआ यह सिर्फ कंपोजिशन हुआ, यह क्रिएशन नहीं हुआ, यह केवल जोड़-तोड़ हुई, निर्माण न हुआ, सृजन न हुआ।
विचार तो मौलिक है ही नहीं। और सत्य मौलिक है, सत्य सदा मौलिक है। सत्य सदा मौलिक रहा है। तो मौलिक सत्य से, सत्य उधार नहीं है, सत्य बासा नहीं है, सत्य सदा ताजा है। वह जो सतत ताजा और मौलिक और नया है, उसे यह बासे विचारों की बुद्धि कैसे जान सकेगी। और इस बासी बुद्धि को लेकर गए, इस उधार दिमाग को लेकर गए, तो सत्य को नहीं जान पाएंगे। हां, यह हो सकता है कि सत्य के काम से कोई मत, कोई ओपिनियन, ट्रूथ नहीं ओपिनियन, सत्य नहीं, कोई मत, कोई मत आप मान कर लौट आएंगे और कहेंगे, यही सत्य है। एक आदमी कहता है, जैन धर्म सत्य है। यह एक मत है। सत्य का जैन धर्म से क्या लेना-देना। एक आदमी यह कहता है, ईसाइयत सत्य है। यह एक मत है, एक ओपिनियन है, ओपिनियन हजार हो सकते हैं, सत्य हजार नहीं हो सकते, सत्य एक है। ओपिनियन, मत, संप्रदाय कितने भी हो सकते हैं, जितने आदमी हैं उतने मत हैं दुनिया में।

आप क्या समझते हैं, दो ईसाई आपस में सहमत हैं? बाप ईसाई और बेटा ईसाई सहमत नहीं हैं। आप समझते हैं, दो मुसलमान आपस में सहमत हैं, भूल में मत पड़ना, पति मुसलमान और पत्नी मुसलमान सहमत नहीं हैं आपस में।
दुनिया में जितने आदमी हैं, उतने मत हैं, लेकिन सत्य एक है। और बुद्धि
के पास सिवाय मत के और कुछ भी नहीं है। मत को लेकर जो बुद्धि जाती है, सत्य

को जानने वह मत के कारण ही नहीं जान पाती और वापस लौट जाती है। मत की दीवार बीच में खड़ी हो जाती है। और मत उधार है, मैंने कहा, दूसरों के लिए हुआ है। अगर आप हिंदू हैं तो आप हिंदू हो कैसे गए? सोचा है आपने हिंदू होना? बाप से मिल गया हिंदू होना। कितनी दुर्भाग्यपूर्ण दुनिया है कि हिंदू होना भी वसीयत में मिलता है। मुसलमान होना भी वसीयत में मिलता है। कुछ दिनों में हो सकता है कि कांग्रेसी और कम्युनिस्ट होना भी वसीयत में मिले--कि कम्युनिस्ट के घर में पैदा हो गए तो कम्युनिस्ट होना पड़ेगा, क्योंकि इस लड़के का बाप कम्युनिस्ट है।
अजीब बात है, अगर बाप मुसलमान है तो बेटे के मुसलमान होने की कौन सी अनिवार्यता है? और जब तक सारे बेटे इस पागलपन से इंकार नहीं करेंगे दुनिया अच्छी नहीं हो सकती। बेटों को कहना चाहिएः तुम्हारी मर्जी थी कि तुम मुसलमान थे, हमारी मर्जी तो आदमी होने की है। तुम्हारी मर्जी तुम हिंदू थे, हमारी मर्जी तो आदमी होने की है। कृपा करो, हमको हिंदू, मुसलमान मत बनाओ। जिस दिन बेटे बाप से उधार मत लेने से इंकार कर देंगे, उस दिन जमीन कुछ और हो जाएगी। उस दिन ऐसा पागलपन नहीं दिखाई पड़ेगा। जैसा हिंदुस्तान, पाकिस्तान दिखाई पड़ता है।
क्या आपको पता है, मैंने एक कहानी सुनी है कि जब हिंदुस्तान, पाकिस्तान का बंटवारा हो रहा था, तो एक पागलखाना था, जो दोनों मुल्कों की सीमा पर पड़ गया। और सवाल उठा कि पागखाने को कहां करना है हिंदुस्तान में कि पाकिस्तान में। बड़ा मुश्किल हो गया। न हिंदुस्तानी नेताओं को फिकर थी कि पागल इधर आएं न मुसलमान नेताओं को फिकर थी कि पागल इधर आएं। वे खुद अपने पागलपन में पागल थे। उन्हें कहां फुरसत थी कि पागलों से... उन्होंने कहा, पागलों से ही पूछ लो। पागलों से पूछा गया कि तुम कहां जाना चाहते हो? हिंदुस्तान में या पाकिस्तान में? उन्होंने कहाः हम कहीं नहीं जाना चाहते, हम यहीं रहना चाहते हैं। उन्होंने कहा कि रहोगे तो यहीं तुम, लेकिन तुम जाना कहां चाहते हो, हिंदुस्तान में या पाकिस्तान में। उन्होंने कहा कि बड़ी पागलपन की बात कर रहे हैं आप। जब हम यहीं रहेंगे तो हम हिंदुस्तान, पाकिस्तान में जा कैसे सकते हैं? ये दोनों बातें एक साथ कैसे हो सकती हैं? अधिकारी सिर पीटने लगे, कि तुम्हारी कुछ समझ में नहीं आता? तुम बिल्कुल पागल हो। उन्होंने कहा: हमारी सब समझ में आता है, लेकिन जब हम यहीं रहेंगे, तो यह सवाल ही फिजूल है कि कहां जाना है। उन्होंने कहाः फिर भी तुम बताओ, तुममें हिंदू कौन है, मुसलमान कौन? उन्होंने कहाः हम तो सिर्फ पागल हैं, हम हिंदू, मुसलमान नहीं हैं।
तो सोचते हैं आप, पागल भी कहते हैं, हम सिर्फ पागल हैं। और वे जो समझदार हैं, वे कहते हैं, हम हिंदू हैं, मुसलमान हैं। उन्होंने कहाः हम तो सिर्फ पागल हैं। हमें पता नहीं, हम कौन-कौन हैं। ज्यादा से ज्यादा हम कह सकते हैं, हम आदमी हैं। अगर आप एतराज नहीं करो तो, क्योंकि पागलों की हर बात पर ऐतराज हो जाता है। ज्यादा से ज्यादा हम आदमी हैं।
फिर भी कोई रास्ता नहीं था, तो बीच में से रेखा खींच दी। जो पागल का कमरा जिस तरफ पड़ गया, हिंदुस्तानी पागल हिंदुस्तान की तरफ आ गए और पाकिस्तानी पागल पाकिस्तान की तरफ चले गए और बीच में दीवाल उठा दी। पागल उस दीवाल पर चढ़-चढ़ कर अब भी बैठ जाते हैं और आपस में सोचते हैं। बड़ी अजीब बात है, हम रहे वहीं के वहीं! तुम हिंदुस्तान में चले गए हम पाकिस्तान में चले गए, यह बात क्या है? यह हो क्या गया? पागलों की समझ में नहीं आता।
बात ही ऐसी है कि पागलों की समझ में भी न आए, जैसा हो गया है दुनिया में।
मत, मत मिलता है पीछे से और हम उसे चुपचाप स्वीकार कर लेते हैं। विचार मिलते हैं दूसरों से, हम उन्हें स्वीकार कर लेते हैं। फिर उन विचारों की बड़ी नई खिचड़ी तैयार हो जाती है। हजार-हजार धाराओं से विचार आकर भीतर इकट्ठे हो जाते हैं और आपको यह भ्रम पैदा होता है कि आप भी सोचते हैं। कभी आपने एकाध ऐसा विचार सोचा है, जो आप कह सकें, मैंने सोचा है। आप सोने का घोड़ा ही पाएंगे। और कभी ऐसा कोई विचार नहीं पा सकते, जो आपने सोचा है।
तो ऐसे उधार मस्तिष्क, विचारों के संग्रह और इनके तर्क और इनकी बुद्धि और इनका सारा चिंतन सत्य की तरफ कैसे ले जा सकता है। सत्य की तरफ

जिसे जाना है, उसे यह समझना पड़ेगा कि बुद्धि तो बासी है, उधार है। उसे यह भी समझना पड़ेगा विचार दूसरों के हैं मेरे नहीं हैं। उसे यह भी समझना पड़ेगा कि यह मत है, हजारों हैं। कौन मत सत्य है, मैं कैसे जानूं। मैं तो सत्य को जान लूं, तो शायद बना भी सकूं कि फलां मत सत्य है, लेकिन बिना सत्य को जाने किसी मत को कोई सत्य कैसे कह सकता है। अभी मैं हूं, आपने मुझे देखा, कल आप मेरी तस्वीर देखें, तो आप कह सकते हैं कि हां, यह तसवीर उनकी है। लेकिन आपने मुझे नहीं देखा, न ही कभी आपसे कोई पूछता है, तस्वीर फलां व्यक्ति की है। आप सच मानते हैं कि झूठ, आप कहेंगे कि बड़ी फिजूल बात है। मैं उस आदमी को नहीं जानता। मैं इस तसवीर को सच और झूठ कैसे कहूं। मैं इतना ही कह सकता हूं, यह तसवीर है, किसकी है यह भी नहीं कह सकता। सच और झूठ का तो सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि मैं मूल को नहीं जानता, तो उसकी प्रति को कैसे पहचानूं।
और आप सत्य को बिना जाने कहते हैं, हिंदू धर्म सत्य है, जैन धर्म सत्य है, हमारे स्वामी सत्य हैं, हमारे बाबा सत्य हैं, हमारा फलां सत्य है। सत्य को बिना जाने आप किसी मत को सत्य कहते हैं, इससे ज्यादा असत्य होने की और क्या मनोदशा हो सकती है।
नहीं, सत्य को जानना पड़ेगा पहले। मत! मत को छोड़ना पड़ेगा। तर्क, विचार, बुद्धि, मत, सब छोड़ने की जो सामर्थ्य जुटाता है और मौन खड़ा हो जाता है सब विचार छोड़ कर जीवन के समक्ष। वह जीवन जो बाहर भी है और भीतर भी है। जिसका चित्त, विचार, तर्क को छोड़ कर अत्यंत शांत दर्पण की तरह, मिरर लाइक दर्पण की तरह हो जाता है। उसमें जीवन का प्रतिबिंब बनता है। वही सत्य है।
सत्य को तर्क से किसी ने कभी नहीं पाया। विचार से नहीं पाया, बुद्धि
से नहीं पाया। सबको छोड़ा है, तो छोड़ते ही पाया है कि खोया कभी भी नहीं था। इसे मैं फिर से दोहरा दूं। बुद्धि से, विचार से, तर्क से सत्य को कभी किसी ने नहीं पाया। और जो बुद्धि को, विचार को, तर्क को छोड़ कर शांत होकर खड़ा हुआ है, उसने पाया है कि जिसे मैं खोज रहा था, उसे मैंने कभी खोया ही नहीं था। वह भीतर मौजूद था, लेकिन मत की भीड़ में खो गया था। विचारों की भीड़ में खो गया था। ओपिनियन, ध्यान तथाकथित बासा और उधार इकट्ठा हो गया था और उसमें वह दब गया था, जो सच्चा है।
सत्य तो हम स्वयं हैं। हम हैं, तो सत्य है। हमारा होना सत्य है। अपने
ही इस होने को हम विचार से जानने जाएंगे? यह ऐसे ही है, जैसे कोई अपनी ही आंख से अपनी ही आंख को देखने जाए। अपने ही हाथ से अपने हाथ को पकड़ने चला जाए। तर्क, विचार, सत्य को पकड़ने की कोशिश है, लेकिन सत्य तो वहां पीछे मौजूद है, जहां से विचार उत्पन्न हो रहा है वहां सत्य मौजूद है। जहां से बुद्धि शक्ति पा रही है, वहां सत्य मौजूद है।
यह मैं कहना चाहूंगा, सत्य से नहीं मिल सकता है सत्य। लेकिन सत्य से क्या कुछ भी नहीं, तर्क से क्या कुछ भी नहीं हो सकता है? एक बात हो सकती है, अगर कोई आदमी सम्यक तर्क करे, सोचे-विचारे तो एक महत्वपूर्ण नतीजा उसे मिलेगा। अगर कोई ठीक तर्क करेगा, तो उसे पता चलेगा कि तर्क व्यर्थ है। अगर कोई ठीक विचार करे, तो वह पाएगा कि विचार छोड़ना पड़ेगा। इतनी महत्वपूर्ण बात जरूर मिल सकती है और यह बहुत बड़ी बात है। इतना भी पता चल जाए कि छोड़ देना पड़ेगा। लेकिन छोड़ वही सकता है, जिसने कभी किया हो। जिन्होंने कभी किया ही नहीं, आंख के अंधे बने बैठे हुए हैं, वे छोड़ेंगे क्या खाक। छोड़ने के पहले करना जरूरी है।
मैंने सुना है, एक स्टेशन पर बड़ी भीड़-भाड़ थी और मेले में लोग जा रहे थे। और उस स्टेशन पर एकदम शोरगुल मचा हुआ थाः चलो, चढ़ो, सामान रखो, उठाओ, मित्रों को भीतर लाओ, लड़का कहां है? पत्नी कहां है? सारे स्टेशन पर शोरगुल है। किसी मेले में ट्रेन जा रही है। सारे लोग हरिद्वार जा रहे हैं। लेकिन एक आदमी खड़ा हुआ है प्लेटफार्म पर और कह रहा हैः एक बात का पक्का जवाब दे दो। फिर उतरना तो नहीं पड़ेगा इस ट्रेन से। अगर उतरना पड़े, तो हम चढ़ते ही नहीं। मित्र कह रहे हैंः जल्दी करो! सीटी बज गई, झंडी दिखाई जा रही है, अब यहां बकवास का मौका नहीं है, तर्क का, रास्ते में बात कर लेंगे। उतरना तो पड़ेगा। हरिद्वार पर जब पहुंच जाएगी गाड़ी, तो उतरना तो पड़ेगा, लेकिन यहां से तो चढ़ना पड़ेगा। अभी चढ़ो। और वह मित्र कह रहा है कि मैं उस चीज में चढ़ता

ही नहीं, जिसमें से उतरना पड़े। फषयदा क्या है चढ़ने से, जब उतरना है। उसका तर्क ठीक है, लेकिन मित्र नहीं माने। जबरदस्ती उसको गाड़ी में बिठा लिया। फिर गाड़ी चल पड़ी। फिर हरिद्वार का स्टेशन आ गया। अब उलटी आवाजें मची हुई हैं। हर आदमी चिल्ला रहा हैः उतारो। मेरा सामान कहां है? मेरा लड़का कहां है? जल्दी उतरो गाड़ी जाने वाली है और वे मित्र उसको फिर पकड़े हैं, वह कह रहा है, अब मैं उतरूंगा नहीं। जब मैं चढ़ ही गया तो उतरना क्या? और अगर मुझे उतरना ही था, तो चढ़ाया क्यों? अब वे मित्र बहुत कहते हैंः वह दूसरी स्टेशन थी, जहां हम चढ़े थे। यह दूसरी स्टेशन है, जहां हम उतरते हैं। वहां चढ़ना जरूरी था और यहां उतरना जरूरी है।
तर्क पर चढ़ना भी पड़ता है, उतरने के लिए, लेकिन स्थान बदल जाते हैं। इसलिए ध्यान रहे, मैं अंधविश्वास का पक्षपाती नहीं हूं, नहीं तो कोई यह सोच ले कि मैं कह रहा हूं तर्क, विचार, कुछ नहीं करना। किसी के भी चरण पकड़ लो आंख बंद करके। और कहीं का भी ताबीज बांध लो और मजा करो। कुछ विचार नहीं करना, कोई तर्क नहीं करना। जो कोई कह दे, वह मान लो, यह मैं नहीं कह रहा हूं। यह तो तर्क से भी बदतर अवस्था है। तो मैं तीन अवस्थाओं की बात कर रहा हूं।
एक विश्वास की अवस्था है, यह सबसे नीची, सबसे ओछी, सबसे खतरनाक अवस्था है। दूसरी अवस्था विचार की है, यह विश्वास से अच्छी, बेहतर, लेकिन बीच की अवस्था है। विश्वास से ऊपर, विचार से ऊपर फिर निर्विचार की अवस्था है, ध्यान की अवस्था है। एक अवस्था है विश्वास की, बिलीव की, फेथ की, फेथ और बिलीव और विश्वास वाला आदमी मनुष्य-जाति में सबसे नीची कोटि पर खड़ा है। दूसरी अवस्था है विचार की, थिंकिंग की, तर्क की, रीजनिंग की। यह दूसरा व्यक्ति विश्वास वाले व्यक्ति से ऊपर खड़ा है। इसके पैर में ज्यादा बल होगा। इसकी आंखें ज्यादा खुली होंगी। यह ज्यादा सजग होगा।
पहली अवस्था से सारी दुनिया के अंधविश्वास पैदा होते हैं। हिंदू, मुसलमान, ईसाई पैदा होते हैं। मंदिर, मस्जिद, मूर्तियां बनती हैं। इस सारी दुनिया में जो रिचुअल चलता है, क्रियाकांड चलता है, वह पहली अवस्था से पैदा होता है। दूसरी अवस्था है रीजनिंग की, तर्क की, विचार की। विचार से विज्ञान पैदा होता है, साइंस पैदा होती है। तीसरी अवस्था है निर्विचार की, ध्यान की। तीसरी अवस्था विचार के ऊपर है। और तीसरी अवस्था से सत्य या जिसको कहें धर्म, या जिसे कहें दर्शन, वह पैदा होता है।
विश्वास वाला भी विचार का दुश्मन है, और ध्यान वाला भी विचार का दुश्मन है, लेकिन दोनों की दुश्मनी बिल्कुल अलग है। यह ख्याल रख लेना। मैं भी तर्क और विचार का दुश्मन हूं, ध्यान के पक्ष में। और तर्क और विचार का दोस्त हूं विश्वास के विरोध में। विश्वास को उखाड़ कर फेंक देना है विचार से और फिर विचार को उखाड़ कर फेंक देना है ध्यान से। और फिर ध्यान में उखाड़ कर फेंक देने को कुछ भी नहीं बचता है, वही बचता है, जो उखाड़ कर नहीं फेंका जा सकता।
जैसे एक आदमी के पैर में कांटा लग गया हो। और उसके कांटे को निकालने
के लिए हम कहें, कि एक कांटा और ले आओ। और वह आदमी कहे कि यह क्या बात कर रहे हैं, मैं एक ही कांटे से काफी परेशान हूं। अब आप दूसरा कांटा और मत लाइए। लेकिन हम न माने। और कांटा ले आए और जबरदस्ती कांटा निकालने लगे और वह आदमी चिल्लाने लगे कि एक ही कांटा मेरे पैर में घुसा है, उससे मैं मरा जा रहा हूं। और तुम कैसे दोस्त हो कि दूसरा कांटा भी डाल रहे हो। हम उससे कहें कि हम दूसरे कांटे से पहला कांटा बाहर निकाल रहे हैं। वह आदमी राजी हो जाए। हम उसका पहला कांटा बाहर निकाल दें। वह आदमी कहे, अब दूसरे कांटे को पहले वाले घाव में रख दो, इस कांटे ने बड़ी कृपा की। अब हम इसको सम्हाल कर रखेंगे, घाव में रखेंगे। वहीं रखेंगे, जहां इसने पहले कांटे को निकाल दिया, तो फिर मुसीबत हो जाएगी।
पहले कांटे को निकालने के बाद दूसरा कांटा भी बेमानी है, फेंक देने के योग्य है। तर्क और विचार का एक उपयोग है कि विश्वास के कांटे को निकाल दे। निकला विश्वास का कांटा कि तर्क और विचार फेंक देने योग्य हैं और तब जो अवस्था आती है वह विश्वास की नहीं है, वह ज्ञान की है। तब जो अवस्था आती है,

वह विचार की भी नहीं है, वह निर्विचार की है। और तब जो दिखाई पड़ता है, वह मौलिक है, वह ओरिजिनल है।
इस मौलिक सत्य की खोज में जो विश्वास पर खड़े हैं, उनसे कहूंगा, छोड़ो विश्वास, विचार पकड़ो। जो विचार पर खड़े हैं, उनसे कहूंगा, छोड़ो विचार, ध्यान पकड़ो। और जो ध्यान पर खड़े हैं, वहां न कुछ पकड़ने को बचता है, न छोड़ने को। इसलिए उनसे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। लेकिन इससे बड़ी भूल पैदा हो जाती है।
एक गांव में एक दिन सुबह-सुबह बुद्ध का प्रवेश हुआ। और एक आदमी ने दरवाजे पर ही गांव के आदमी से पूछा कि मैं नास्तिक हूं, मैं ईश्वर को नहीं मानता हूं। आप ईश्वर को मानते हैं? बुद्ध ने कहाः मैं ईश्वर को मानता हूं, ईश्वर है! ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। बुद्ध आगे बढ़े, बीच गांव में एक दूसरे आदमी ने पूछा कि रुकिए मैं आस्तिक हूं। मैं ईश्वर को मानता हूं। मैं पक्का विश्वासी हूं। आप मानते हैं? बुद्ध ने कहाः ईश्वर, ईश्वर है ही नहीं। ईश्वर है ही नहीं, मानने का सवाल नहीं है। ईश्वर बिल्कुल नहीं है। ईश्वर से ज्यादा असत्य और कुछ भी नहीं। सुबह बुद्ध ने कहा ईश्वर है, वही सत्य है। दोपहर बुद्ध ने कहा ईश्वर नहीं है, असत्य है। सांझ को एक तीसरा आदमी आया। और उसने कहाः मुझे कुछ भी पता नहीं है कि ईश्वर है या नहीं। न मैं आस्तिक हूं, न मैं नास्तिक हूं, मैं क्या करूं?
बुद्ध ने कहाः अब तू फिकर ही छोड़ दे। तू चुप हो जा। अब तू नास्तिक-आस्तिक की बात ही छोड़ दे। अब बात मत कर आगे। हम तुझसे कुछ भी न कहेंगे। यह तो ठीक थी, क्योंकि यह तीन अलग-अलग आदमियों से बात हुई।
बुद्ध के साथ एक भिक्षु था आनंद। उसने तीनों बातें सुन लीं। उसकी मुसीबत आप समझ सकते हो। उसके तो प्राण संकट में पड़ गए कि मर गए, सच क्या है? सुबह यह आदमी कहता है कि ईश्वर है, दोपहर कहता है नहीं है, सांझ कहता है छोड़ो दोनों बातें बेकार हैं, चुप हो जाओ। रात जब सोने लगा, तो वह आदमी करवट बदल रहा है। बुद्ध ने उससे पूछा कि बहुत करवट बदलता है आज, बात क्या है? उसने कहाः आपने मेरी जान ले ली। आप पूछते हैं, करवट बदलता है! मैं क्या करूं, ईश्वर है या नहीं? दिन में तीन उत्तर मैंने एक साथ सुन लिए, एक ही आदमी से। मेरी हालत समझते हैं? मैं बुखार में पड़ गया हूं। मेरा सारा चित्त खिन्न हो गया है।
बुद्ध ने कहाः पागल तुझे तो एक भी उत्तर नहीं दिया था, तूने सुना क्यों। जिन्हें दिया गया था, उनके लिए था। तूने सुना क्यों, तुझे किसने दिया था। उसने कहाः और गजब, मैं साथ था, मुझे सुनाई पड़ गया, सुना कहां। लेकिन सुनाई पड़ कर ही मुश्किल में पड़ गया हूं। बुद्ध ने कहाः जो दूसरों के लिए दी हुई बातों को सुन लेते हैं। जो दूसरों के चले हुए रास्तों को देख लेते हैं, जो दूसरों के किसी भी तरह प्रभाव में पड़ गए हैं, उनकी ऐसी मुसीबत होती है। तुझे क्या मतलब था? फिर भी तूने सुन लिया, तो मैं तुझे कहता हूं। पहले आदमी में जो मैंने पाया, उसको उखाड़ा। दूसरे आदमी में जो मैंने पाया, उसको उखाड़ा। बुद्ध ने कहाः हम तो उखाड़ने वाले हैं। हम तो सब कूड़ा-कर्कट उखाड़ देते हैं। तीसरे आदमी में उखाड़ने को कुछ भी नहीं था। तो उसे मैंने सचेत किया कि कुछ लगा मत लेना। और जब चित्त की भूमि खाली रह जाती है, जहां कोई विश्वास नहीं, कोई विचार नहीं, कोई तर्क नहीं। जहां कोई मत नहीं, कोई संप्रदाय नहीं, तब वहां उसका दर्शन होता है, जो है, देट व्हीच इ.ज। जो है, बस वही सत्य है।
बहुत से मित्रों ने इस संबंध में कुछ बातें पूछी थीं, इसलिए मैंने इस
पर बात की। एक दूसरे मित्र ने पूछा है कि आप साधना के लिए कहते हैं, लेकिन हममें तो प्यास ही नहीं। आप कहते हैं कि ध्यान करो, केंद्र को जगाओ, कुंडलिनी शक्ति को जगाओ, लेकिन हममें तो प्यास ही नहीं है। यह प्यास कहां से लाएं?
यह बड़ा मुश्किल मामला है। पानी तो कोई दे सकता है, प्यास कोई भी नहीं
दे सकता। और पानी मांगने जाओ, तो कहीं मिल भी जाएगा, लेकिन प्यास मांगने जाओगे, तो कहां मिलेगी। लेकिन ऐसा एक भी आदमी नहीं है, जिसके पास प्यास न हो। अगर प्यास न होती, तो कोई उपाय न था। एक भी आदमी ऐसा नहीं है, जिसको सत्य को जानने की प्यास नहीं है।

एक छोटा सा बच्चा भी, चींटा चल रहा है, उसको पकड़ कर तोड़ डालता है। आप यह
मत सोचना कि वह हिंसा कर रहा है। वे सिर्फ इंक्वायरी कर रहे हैं, वे सिर्फ जांच-पड़ताल कर रहे हैं कि प्राणी चल रहा है, मामला क्या है भीतर? तोड़ कर देख रहा है। कोई चींटे को छोटा बच्चा इसलिए थोड़े मारता है कि चींटे से कोई दुश्मनी है। कि चींटा कोई मुसलमान है, कोई ईसाई है कि मारो। छोटा बच्चा चींटे को तोड़ कर देखता है कि मामला क्या है। क्या चल रहा है। भीतर कौन सी चीज चल रही है। जिज्ञासा।
कहीं पर्दा टांग दो और लिख दोः यहां मत झांकना। फिर, फिर वहां से कोई आदमी निकल सकता है जो बिना झांके निकल जाए?
मैंने सुना है कि एक सूफी फकीर एक जंगल में रहता था। उसने रास्ते के किनारे एक बड़ी तख्ती लगा रखी थी। और तख्ती पर लिखा हुआ थाः पत्थर खाना बिल्कुल मना है, सख्त मना है। अगर पत्थर खाया तो ठीक नहीं होगा। और जिसको मिलना हो, पीछे झोपड़ा है। जो भी आदमी निकलता, उससे मिलने जाता, क्योंकि पत्थर खाना सख्त मना है, मामला क्या है, यह कौन आदमी है और यह कैसा बोर्ड है, यह कैसी तख्ती है? कभी आप ऐसी तख्ती के पास से निकल सकते हैं, जिस पर लिखा होः पत्थर खाना सख्त मना है। जो भी आदमी उस तख्ती को देखता, उतर कर नीचे जंगल में थोड़ी दूर उस झोपड़े तक जाता और उस फकीर से पूछता कि बात क्या है। कोई पत्थर खाता है? जो पत्थर खाने को मनाही की है। उसने कहाः कोई नहीं खाता है, इसलिए बोर्ड वहां लगाया है कि हमसे मुलाकात हो सके, बैठ जाओ। और आज तक इस रास्ते पर एक आदमी ऐसा नहीं निकला जो यहां से बिना मिले हुए चला गया हो। आना ही पड़ता है। क्यों? बोर्ड पर किसी ने लिखा हो, लिखा रहने दें, आपको क्या जरूरत है कि आप मुड़ के जाएं रास्ते से?
जिज्ञासा है। क्या है सच, यह क्या बात है। एक प्रश्न है, जो प्राणों में सबको पकड़े हुए है। छोटे-छोटे बच्चे अपनी मां से पूछते हैं। नया बच्चा घर में आया है, यह कहां से आया। मां समझती है कि बच्चा बिगड़ा जा रहा है। यह कैसी गंदी बातें पूछ रहा है। बिचारे को उसको क्या पता है, वह फिर भी पूछ रहा है कि बच्चा आ गया मामला क्या है। यह कहां से आ गया है। मां-बाप गंदे हैं, वह कोई कह रहे हैं झूठ कि हनुमान जी दे गए, कोई कहता है कुछ। हनुमान जी को इस झंझट से क्या मतलब! और बच्चा आज नहीं कल बड़ा होकर पता लगा लेगा कि हनुमान जी का इसमें कोई कसूर नहीं है। और तब बहुत मुसीबत होगी, क्योंकि तब बच्चे की सारी श्रद्धा उनसे उठ जाएगी, जिन्होंने झूठ थोपा था।
आप ध्यान रखें, हर बच्चा बूढ़े बाप का अपमान करता है। मुश्किल से ऐसे लड़के खोजने से मिलेंगे, जो बूढ़े बाप का सम्मान करते हों और फिर बूढ़े बाप बहुत दुखी होते हैं और परेशान होते हैं कि सब लड़ कर बिगड़ गए। लड़के नहीं बिगड़े हैं। लड़कों के बिगड़ने के पहले बाप का बिगड़ना बहुत जरूरी है। नहीं तो लड़के बिगड़ेंगे कैसे? पहली बिगड़ने की बात यहां से शुरू हो गई कि जब लड़के ने सत्य की जिज्ञासा की थी, तब तुमने झूठ उसके ऊपर थोप दिया। उस वक्त बच्चा था, मान गया होगा। बड़े होकर पता चल गया। उस झूठ के साथ तुम सदा के लिए झूठे हो गए। तुम्हारी सारी प्रतिष्ठा सदा के लिए खो गई। अब तुम्हारे प्रति कभी सम्मान नहीं हो सकता। हां, दिखा सकता है सम्मान। जब मर जाओगे, तो श्राद्ध करेगा। लेकिन जिंदा में, जिंदा में रोज प्रार्थना करेगा कि पिता जी स्वर्गवासी कब होंगे।
स्वाभाविक है, वह जो प्यास है जानने की, वह सब तरफ से हर आदमी के भीतर है। ऐसा आदमी खोजना मुश्किल है। हां, मिल सकता है ऐसा आदमी। लेकिन वह, वह आदमी होगा जिसे सब मिल गया। उसके पास प्यास नहीं होगी। यह बात ठीक है, लेकिन कोई पूछता है मुझसे कि हममें प्यास नहीं है। अगर प्यास नहीं थी, तो आप यहां आए कैसे? और प्यास नहीं थी, तो यह कागज लिखने और प्रश्न लिखने की तकलीफ आपने कैसे की, और क्यों परेशान हुए? प्यास तो है। हां, कम-ज्यादा हो सकती है। प्यास न हो, तब तो कोई उपाय नहीं है। कम-ज्यादा हो सकती है। कम-ज्यादा को बदला जा सकता है।
अगर कोई दीये में ज्योत न जलती हो, तो आप बाती ऊंचा करते रहें, उससे क्या होने वाला है, कोई बाती ऊंची करने से ज्योति जल जाएगी? बाती ऊंची करके और नासमझी होगी। लेकिन अगर ज्योति धीमी-धीमी जलती हो, तो बाती ऊंची की जा सकती है और ज्योति जोर से जल सकती है।

प्यास तो सबके पास है। बिना प्यास के कोई आदमी पैदा नहीं होता। सत्य
की प्यास कहें, धर्म की प्यास कहें, परमात्मा की प्यास कहें, कोई भी नाम दे दें, प्यास है। हां, लेकिन धीमी और कम जल सकती है।
धीमी और कम जलने का मतलब केवल इतना है, उसका मतलब यह नहीं कि पाजिटिव रूप से, विधायक रूप से किसी की प्यास कम और किसी की ज्यादा है, नहीं यह भी नहीं है। उसका कुल मतलब यह है कि किसी की प्यास पर ज्यादा बोझ है, दूसरी झूठी प्यासों का। और किसी की प्यास पर दूसरी झूठी प्यासों का बोझ कम है। जिसकी असली प्यास पर झूठी प्यास का बोझ कम है, उसकी प्यास ज्यादा जलती हुई मालूम पड़ेगी।
हमने बहुत सी झूठी प्यासें सीख रखी हैं और उन झूठी प्यासों को समझना जरूरी है, तो सच्ची प्यास एकदम भभक कर उठ बैठेगी। कैसी-कैसी झूठी प्यासें सीख रखी हैं, जिनका कोई हिसाब नहीं।
एक आदमी पड़ोस से निकला हुआ है, वह एक चश्मा लगाए हुए है। आपको ख्याल ही नहीं था कल तक कि चश्मा लगाना है। एक आदमी को चश्मा लगाए देख कर आपको पहली दफा पता चला कि चश्मा लगाना बहुत जरूरी है। आश्चर्य है। आपको चश्मे का सवाल ही नहीं था। एक दूसरे आदमी को चश्मा लगाए देख कर एक प्यास पैदा हो रही है कि आपको भी चश्मा लगाया जाना चाहिए।
फिर चारों तरफ हजारों-हजारों तरह के लोग हैं और सबको देखके आप नई-नई झूठी प्यासें गढ़ रहे हैं, जो आपके भीतर नहीं है। जो बाहर से देख करके आपके भीतर आती हैं और आप उन्हें पकड़ लेते हैं। और बचपन से मां-बाप उन्हें सिखा रहे हैं, शिक्षक उन्हें सिखा रहे हैं। मां कह रही है बेटे से कि देख पड़ोसी के बेटे को किस ढंग से चलता है, इसी तरह तुझे भी चलना चाहिए। और मां को पता नहीं है कि लड़के को एक खतरनाक रास्ते पर ले जा रही है। पड़ोसी के लड़के की तरफ उसकी आंखें उठा रही है। वह जिंदगी भर पड़ोसी के लड़कों को देखता रहेगा, और पड़ोसी के लड़के जो कुछ भी करेंगे, वह भी करेगा।
आप जो कपड़े पहने हुए हैं, वे आपने नहीं पहन लिए हैं, पड़ोसी वैसे पहने हुए है, यह मुसीबत है। जिस सिनेमाघर में आप जा रहे हैं, आप नहीं गए हैं, पड़ोसी उस तरफ जा रहे हैं और आप भी चले जा रहे हैं। आप जो अखबार पढ़ रहे हैं, वह आप नहीं पढ़ रहे हैं, पड़ोसी पढ़ रहे हैं।
बर्नार्ड शॉ ने अपनी पहली किताब लिखी, तो बामुश्किल तो छपी, किसी तरह
छप गई। गहना, पैसा किसी तरह इंतजाम करके गिरवी रख कर किताब छप गई, लेकिन खरीदे कौन? क्योंकि किताब तो वही बिकती है, जो पहले से बिकती हो। क्योंकि बिकती हुई किताब को देख कर लोग खरीदते हैं। जब कोई पड़ोसी खरीद ले कोई किताब, तब आप खरीदते हैं।
अब जब किताब पहली दफा लिखी, न कोई बर्नार्ड शॉ का काम जानता है, न कुछ। किताब कोई दुकानदार रखने को तैयार भी नहीं। तो बर्नार्ड शॉ ने अपने पांच-सात मित्रों से कहा कि तुम एक कृपा करो, अलग से करने को कुछ नहीं है, जहां से तुम निकलो, अगर किताब की दुकान मिल जाए, तो खड़े होकर इतना पूछ लेना कि जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की फलानी किताब है? और खरीदने का कोई डर ही नहीं, क्योंकि किताब किसी दुकान पर है नहीं, तो तुम बेफिकरी से पूछ लेना। और आगे बढ़ जाना और इतना पंद्रह दिन कृपा कर दो, जहां किताब की दुकान मिले, तुम इतना पूछते चले जाना जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की फलानी किताब है?
उन पांच-सात मित्रों ने पंद्रह दिन के भीतर करीब-करीब सब किताबों की दुकान पर दस-पांच चक्कर लगा दिए। दुकानदार ने कहाः जॉर्ज बर्नार्ड शॉ कोई बहुत बड़ा लेखक मालूम होता है। हम अभी तक किताब नहीं मंगाए, जो देखो वही पूछ रहा है जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की किताब।
दुकानदारों ने किताब मंगा कर रख ली। बर्नार्ड शॉ की किताबें जोर से बिकीं और ग्राहक भी आए, तो दुकानदारों ने कहाः पता है कुछ, सारी बस्ती जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की किताब पढ़ रही है। जो आदमी आता है, वही पूछता हैः जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की किताब आपने देखी।
उन्होंने कहा कि जब सारी बस्ती पढ़ रही है, तो हमें पढ़नी ही पड़ेगी।
किताब दो।

बर्नार्ड शॉ ने लिखा है कि मैंने पहली किताब इस तरह बेची और दूसरी किताबें पहली किताब बिकवाएं चली जा रही है, और बिकती रहेंगी। किताब जॉर्ज बर्नार्ड शॉ की, पता है आपको! अब रुकना बहुत मुश्किल है।
एक मुसलमान फकीर था, नसरुद्दीन। वह एक दिन मस्जिद में गया। मस्जिद में वह जाता नहीं था। कोई अच्छे आदमी कभी नहीं जाते। चला गया। गांव के लोगों ने कहाः मस्जिद में बड़े बुद्धिमान लोग इकट्ठे होते हैं। तो उसने कहाः जरा मैं देख आऊं। मस्जिद नहीं गया था, बुद्धिमान लोगों को देखने गया था। पहले तो उसने कहा कि बुद्धिमान लोगों का इकट्ठा होना जरा मुश्किल है। नासमझ तो इकट्ठे होते देखे जाते हैं, बुद्धिमान कहां इकट्ठे होते देखे जाते हैं, फिर भी जाऊं। वह गया। पीछे से पहुंचा, भीड़ बढ़ गई थी। वह मस्जिद में नीचे बैठ गया। सामने वाले आदमी का कुर्ता उसने ऐसा खींचा। उस आदमी ने लौट कर पीछे देखा। उसने कहा कि इस मस्जिद का ऐसा नियम है कि सामने वाले का कुर्ता खींचना पड़ता है। बस उस आदमी ने आगे वाले का कुर्ता खींचा। उस आदमी ने चौंक कर पीछे देखा। उस आदमी ने कहाः यहां का ऐसा नियम मुझे बताया गया, आदमी का कुर्ता, आगे का, खींचना। पूरे मस्जिद के लोग एक-दूसरे का कुर्ता खींचने लगे, वह खड़ा हो गया और उसे कहा कि गोबर-गणेशो, तुम ईर्श्वर को खोजने आए हो?
हम एक-दूसरे को देख कर हजारों तरह की प्यासें पैदा कर रहे हैं। जो बिल्कुल झूठी हैं और दुनिया भर के विज्ञापनदाताओं को और दुकानदारों को यह पता चल गया है कि आदमी नासमझ है और आदमी में झूठी प्यास, फाल्स थर्स्ट पैदा की जा सकती है। और वह विज्ञापन जोर से करता है। और प्यास पैदा हो जाती है। और इस तरह की हजारों प्यास हमारे ऊपर हैं। और इन प्यासों के कारण, वह जो प्यास है, जो जन्म से मिली है, वह दबी है और तड़प रही है।
सवाल उस प्यास के कम होने का नहीं है, सवाल इन प्यासों के ज्यादा होने
का है। मगर इन प्यासों का दायरा बहुत ज्यादा है। अब एक आदमी को अगर मिनिस्टर होना है, तो परमात्मा की प्यास को तो दबाना ही पड़ेगा, एक तरफ रखना पड़ेगा। क्योंकि मिनिस्टर होने की दौड़, तो परमात्मा की दौड़ एक तरफ रखनी पड़ेगी। परमात्मा से कहना पड़ेगा, थोड़ी देर ठहरिए, मैं पहले मिनिस्टर हो जाऊं, फिर आप पर नजर करेंगे। और यह मामला है ही कि मिनिस्टर हो जाओ तो और नई मुसीबत, फिर चीफ मिनिस्टर होना पड़ता है। फिर चीफ मिनिस्टर हो जाओ तो और मुसीबत, क्योंकि पीछे के लोग आगे धक्का देते हैं, और आगे और लोग दिखाई पड़ते हैं। और उनको देख कर ऐसा लगता है कि और आगे जाना एकदम जरूरी है।
मैंने सुना है, एक कारागृह था, एक जेलखाना था, और उस जेलखाने में एक छोटा अस्पताल है कैदियों के लिए। वे सारे कैदी जो बीमार हो जाते हैं, उस अस्पताल में भर्ती किए जाते हैं। जेलखाने का अस्पताल है, बड़ी ऊंची दीवालें हैं और कैदी, हथकड़ियां बंधी हैं और अपनी-अपनी खाट से बंधे हैं, हिल भी नहीं सकते, सिर्फ एक दरवाजा है। उस दरवाजे पर नंबर एक की खाट है।
नंबर एक का कैदी रोज सुबह उठके ऐसा बाहर झांकता है और कहता हैः अदभुत आकाश! ऐसा आकाश कभी दिखाई नहीं पड़ा। आह! कैसे रंगीन बादल हैं, कैसे फूल खिले हैं। गुलमोहर ने तो छा दिया है पूरे आसमान की रेखा को, सुर्ख कर दिया है, लाल अंगारे फैल गए हैं। कभी कहता है कि गुलाब की सुगंध आ रही है। कभी रात को कहता है कि चांदनी बरस रही है। रात-रानी हवा से भर गई और सारे अस्पताल के कैदी तड़प उठते हैं कि नंबर एक की खाट पर हम कब पहुंचे। नंबर एक की खाट पर क्या-क्या हो रहा है। चांद भी आया है, सूरज भी निकलता है। गुलमोहर भी खिलते हैं, रात-रानी भी खिलती है। कभी एकदम कान लगा कर वह कहने लगता हैः आह! कौन गीत गा रहा है, ऐसा गीत कभी नहीं सुना।
चाहती है तबीयत कि दिल्ली कब पहुंच जाए। पता नहीं राष्ट्रपति के सिंहासन पर बैठे आदमी को क्या दिखाई पड़ रहा है। कौन से गुलमोहर खिल रहे हैं, कौन सी चांदनी खिल रही है। क्या हो रहा है, कब जाएं, लेकिन खाटें हैं और हथकड़ियां। वे अस्पताल में भी सब बंधे, वे सब रोज प्रार्थना करते हैं हे भगवान! यह नंबर एक का आदमी कब मर जाए। नंबर एक का आदमी एक ही फायदे में रहता है कि सारा मुल्क प्रार्थना करता है कि कब यह मर जाए। शायद भगवान को इसलिए दया आ जाती हो तो बात दूसरी है कि इतने लोग जिसको मारने के लिए कहते हैं, उसको कुछ दिन बचाओ। और तो कोई फायदा नहीं दिखाई पड़ता।

वह सारा अस्पताल, फिर आखिर वह आदमी मर जाता है। कई बार मरने का धोखा देता है। आदमी एकदम से थोड़े मरते हैं। आदमी कई दफा धोखा देते हैं। कई दफा उसके फिट आ जाता है। सब खुश हो जाते हैं। हालांकि ऊपर से सब दुखी हो जाते हैं और कहते हैंः बड़ा दुख हो रहा है। तुम चले जाओगे तो हमारा क्या होगा। और भीतर से कहते हैं, कहीं रुक ही मत जाना।
नंबर एक की खाट और हर मरीज डाक्टरों की खुशामद करता है। जब वह बीमार पड़ता है, तब सब मरीज एकदम खुशामद करने लगते हैं, उसका बीमार पड़ना डाक्टरों के लिए, बड़ा मौसम आ जाता है। सब रुपये सरकाने लगते हैं कि जरा ख्याल रखना, नंबर एक की जगह खाली हो तो हमें पहुंचा देना। जहां नंबर एक के आदमी के मरने की बात उठती है, वहीं सब तरफ रुपये खिसकने लगते हैं। सब तरफ आदमी चलने लगते हैं। सब तरफ गड़बड़ शुरू हो जाती है। कौन नंबर एक।
आखिर मर जाता है। आखिर आदमी कब तक धोखा देगा, मरना ही पड़ता है। कितनी बार बीमारी से लौटोगे, एक बार तो जाना ही पड़ेगा। वह भी बेचारा मर गया। मर गया और एक दूसरा कैदी जीत गया डाक्टरों को रिश्वत देने में। उसकी हथकड़ियां खोली गईं। सारे कैदी ताली पीट रहे हैं, कि अब हम तुम्हारे जन्म-दिन पर कैदी दिवस मनाएंगे। क्योंकि तुम प्रथम हो गए। पहली बार ऐसे हमारी आंखों में दिखाई पड़ा है कि हमारे बीच से कोई कैदी पहली नंबर की खाट पर जा रहा है। और वह कैदी अकड़ कर गया, पहली नंबर की खाट पर बैठा और बाहर देखा। वहां पत्थर की एक बड़ी दीवाल के सिवाय और कुछ भी नहीं है। मगर उसने कहाः यह तो बड़ी मुश्किल हो गई। अगर लौट कर मैं कहता हूं कि सिर्फ पत्थर की दीवाल है, तो सिर्फ मैं ही मूढ़ बन जाऊंगा, और अब फायदा भी क्या है? लौट कर वह कहता हैः धन्य हुआ! कैसा सूरज खिला है, कैसे फूल खिले हैं। कैसा आनंद बरस रहा है। मित्रो, कब तुम्हें यह मौका मिलेगा।
और फिर सारा अस्पताल प्रार्थना करता है कि कब तुम मरो, तभी यह मौकष मिल सकता है। हे भगवान! नंबर एक की जगह खाली करो। और वह चलता है और उस अस्पताल में हमेशा से चल रहा है। और न मालूम कितने कैदी उस नंबर एक की खाट पर आते हैं, मरते हैं और खतम हो जाते हैं, लेकिन कोई कैदी इतनी हिम्मत नहीं जुटा पाता कि कह दे, बाहर, बाहर कुछ भी नहीं है, सिर्फ एक पत्थर की दीवाल खड़ी है। और दौड़ जारी है।
हम इस तरह की न मालूम कितनी दौड़ों में संलग्न हैं। कितनी प्यासें हैं हमारी, और कैसी फिजूल की प्यासें हैं। एक आदमी थोड़ा अच्छा कपड़ा पहने हुए है, तो मैं अच्छा कपड़ा पहनने की प्यास से भर जाता हूं। एक आदमी थोड़े बड़े मकान में है, तो मैं मकान की प्यास से भर जाता हूं। एक आदमी नये मॉडल की कार में है, तो पिछले वर्ष की कार एकदम बैलगाड़ी मालूम पड़ने लगती है। यह सारी दौड़, यह सारी प्यास उस प्यास को दबा रही है। और इसलिए वह प्यास नहीं मालूम पड़ती। इसे मुझसे मत पूछो कि वह प्यास तो हममें है नहीं। प्यास तो है लेकिन और प्यासें उसे दबाती होंगी। और हमारी शक्ति अगर बहुत सी प्यासों की दिशाओं में भटक जाए, तो फिर मौलिक, केंद्रीय, वह जो जड़ में प्यास है, वह वंचित रह जाती है। वह सूख जाती है। धीरे-धीरे हम भूल ही जाते हैं, सच तो यह है कि हम भूलना चाहते हैं, हम भुला देते हैं। हम धीरे-धीरे बिल्कुल ही भुला देते हैं कि और भी कोई प्यास हो सकती है। कमाओ धन, बनाओ मकान, बच्चे पैदा करो पर्याप्त है। जीवन पूरा हो जाता है।
जो आदमी समझता है कि इन प्यासों में जीवन है, उसके लिए अभी देर है। उसके लिए बहुत देर है। उसकी परमात्मा की प्यास के अंकुर को बाहर फूटने में बहुत समय लग जाएगा। लेकिन ध्यान रहे, इसमें किसी और को जिम्मेदार मत समझना। जिम्मेदार वह व्यक्ति स्वयं है।
तो अपने भीतर खोल कर देखना कि मैंने कोई झूठी प्यासें तो नहीं पकड़ रखी हैं, कहीं मैं उनमें तो नहीं जी रहा हूं। अगर उनमें मेरी चेतना खो गई है, तो मूल प्यास का सिंचन बंद हो जाएगा। उस प्यास की जड़ें कमजोर पड़ जाएंगी। वह प्यास दब जाएगी। करीब-करीब, मरी-मरी हो जाएगी। मनुष्य के जीवन में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण खोज है, वह मृत पड़ी है और जीवन में जो बिल्कुल व्यर्थ की खोजें हैं, वे सबकी सब सबल होकर सबके प्राणों को अवशोषित कर रही हैं। धार्मिक प्यास से प्रभु की प्यास को जगा लेने का एक ही रास्ता है कि
उन प्यासों से सावधान रहना, जो झूठी हैं। और जो केवल पड़ोसी को देख कर पैदा

हो जाती हैं, उन प्यासों से सावधान रहना, जो सिर्फ नकल से पैदा होती हैं। जिनका कोई मौलिक कारण नहीं है भीतर। जिनके लिए भीतर सच में कोई बेचैनी नहीं है। जो बेचैनी क्रिएटिड है, बाहर से पैदा की गई। और अब तो बाहर से पैदा करने के ऊपर सारा व्यवसाय है, सारा व्यापार है। आदमी की इतनी जरूरतें नहीं हैं, जितनी जरूरतें दिखाई पड़ रही हैं। और जो जरूरतें होनी चाहिए, उनका कोई पता ही नहीं है, वे एक तरफ रखी हुई हैं।
एक गांव में बुद्ध गए हैं और गांव के कुछ लोगों ने आकर कहा कि आप तीस साल से आते हैं हमारे गांव में, लेकिन अब तक कितने लोगों को मोक्ष मिला है? कितने लोगों ने सत्य पाया? बुद्ध ने कहाः इसका उत्तर मैं सांझ को दूंगा। अभी मैं एक जरूरी काम में हूं। तुम थोड़ी मेरी सहायता करो। यह कागज ले जाओ। और गांव में जाकर लिख लाओ, कितने लोग मोक्ष जाना चाहते हैं, आज की रात वे आ जाएं। उस आदमी ने कहाः क्या मतलब? बुद्ध ने कहाः वह बाद में बताऊंगा, तुम जाओ।
छोटा सा गांव है। तीन-चार सौ लोग होंगे। वह आदमी एक-एक के घर गया। उसने पूछा कि आज बुद्ध का आदेश हुआ है कि जो भी मोक्ष जाना चाहते हों, आज सांझ उनके दरख्त के पास इकट्ठा हो जाएं। आज वे उसे मोक्ष भेज देंगे। और अपना नाम लिखा दें। लोगों ने कहाः जाओ अभी अपना काम करो, हमें और काम नहीं है जो मोक्ष जाएं। किसी ने कहाः कैसे अपशकुन की बात करते हो, हम कोई मरने के करीब हैं। अभी हम जवान हैं। यह सब बूढ़ों के पास जाओ। बूढ़ों के पास भी वह आदमी गया। बूढ़ों ने कहाः तुम क्या समझते हो, हम बूढ़े हो गए, तो मर जाएं। शर्म भी नहीं आती आते, जाओ कहीं और, अभी हमें दूसरे काम हैं।
वह आदमी तो हैरान हो गया। गांव में एक नाम नहीं मिला और रोज बुद्ध की सभा में बहुत लोग आते थे। उस रात कोई नहीं आया। क्योंकि सब डरे कि कहीं मोक्ष मिल ही न जाए।
आप ही सोचिए, अगर कल मैं एक सभा और रखूं, रखूंगा नहीं। और यह कह दूं कि
कल सिर्फ वही लोग आएं, जो मोक्ष जाना चाहते हैं, क्योंकि मोक्ष चले ही जाएंगे वे यहीं से, फिर कोई नहीं आएगा। आने की बात दूर, इस रास्ते से कोई नहीं निकलेगा। पहचाना हुआ आदमी, झंझट कहीं कोई हवा लग जाए, कुछ बात हो जाए, कुछ-कुछ हो जाए। कोई नहीं आया। वह आदमी खुद नहीं आया। लिस्ट लेकर। उस आदमी ने सोचा कि सुबह दे देंगे यह कागज, खाली तो ठहरा। हम क्यों जाएं। सुबह बुद्ध उसके घर गए और कहा कि महाशय तुम आए नहीं। उसने कहाः मैं डरा कि कोई तो जा नहीं रहा, हम भी क्यों जाएं। सुबह दे देंगे, कागज में कुछ है भी नहीं, नाम तो कोई मिला नहीं। बुद्ध ने कहाः अब भी तुम मुझसे पूछते हो, तीस साल से समझा रहा हूं, कितने लोग मोक्ष गए। मैं किसी को जबरदस्ती धक्के देकर मोक्ष में भेज दूं। सत्य की प्यास, कोई धक्का देकर तो आपको नहीं दे सकता। लेकिन मैं कहता हूं, सत्य की प्यास है। धीमी जल रही है। मंदी जल रही है, दबी-दबी है। पता नहीं चलता कहां है, क्योंकि उसके आस-पास बहुत कुछ जल रहा है। बड़े- बड़े नियोन लाइट लगा रखे हैं उसके आस-पास। वह छोटा सा दीया पता नहीं चलता। उसकी कोई पहचान नहीं होती, उसकी कोई खबर नहीं मिलती। वह किरण दब गई है, वह आवाज दब गई है।
थोड़ा खोजें, थोड़ा अपनी प्यासों को हटाएं और कभी देखें कि सच में ये सारी प्यासें जो मैं चाहता हूं कि पूरी हो जाएं, अगर पूरी हो गईं; फिर क्या। क्या फिर मेरी यात्रा पूरी हो जाएगी? मैं हो जाऊंगा आप्तकाम, आ जाएगा फुलफिलमेंट, कह सकूंगा पा लिया सब, मिल गई वह गाड़ी, मिल गया वह मकान, वह स्त्री, वह बच्चा सब? फिर तो शायद ख्याल आए असली प्यास यह नहीं हो सकती, क्योंकि जिसके पूरे होने पर फिर प्यास बाकी रहती है, वह प्यास असली नहीं हो सकती। तो फिर शायद
एक अंतिम बात, फिर मैं चर्चा पूरी कर दूंगा। कुछ मित्रों ने कहा है कि
आप कुछ ऐसी बातें कह देते हैं कि मन को बड़ा धक्का लगता है, बहुत शॉकिंग हो जाती है।
अब बड़ा मुश्किल है, आपका मन बड़ा कमजोर है, इसमें हम क्या करें। ऐसा मन लेकर ऐसी खतरनाक जगह जाते क्यों हो। लेकिन मेरा कोई जरूर प्रयोजन, मैं धक्का मारना चाहता हूं।

हम ऐसे जड़ हो गए हैं कि कहीं से कोई धक्का ही नहीं लगता। जड़ हो गए हैं पत्थर की तरह। हिलते ही नहीं, और कभी हवा का झोंका जोर से आए और पत्थर को थोड़ा हिलाए, तो पत्थर बहुत नाराज होता है। फूल बहुत खुश होता है, क्योंकि जिंदगी है हवाओं में, नाचने में। पत्थर बहुत नाराज होता है। यह क्या गड़बड़ करते हो। यह कैसी हवा चलती है कि हम हिल जाते हैं, हमारी जगह से हिल जाते है, चोट लगती है मन को बहुत। एक छोटी सी कहानी से समझाऊं।
एक फकीर था। बड़ा अदभुत आदमी था। उसका नाम था, बहाउद्दीन नक्सबंद। न मालूम कितने लोग उसके पास आते थे। एक आदमी आया। दस-पच्चीस लोग उसके पास बैठे हैं। एक आदमी आया। पैर में झुक गया और कहने लगा कि मुझे सत्य की खोज करनी है। मैं आध्यात्मिक जिज्ञासु हूं। आप मुझे रास्ता बताएं। और उस फकीर ने कहा कि इसी वक्त बाहर निकल जा और अब से अध्यात्म की बात छोड़ दे। अब अध्यात्म की बात ही मत करना, लौट कर यहां आना मत, बाहर निकल, उठ!
सारे लोग जो बैठे थे, बहुत हैरान हो गए। यह क्या मामला है? यह आदमी कैसा है? इतना क्रोधी! जिसको हम समझते थे ज्ञानी, इतना अभिमानी! जिसको हम समझते थे शांत! दो-चार उठ कर चल दिए। उन्होंने कहाः इस आदमी का तो गड़बड़ हो गया। यह आदमी गड़बड़ है। हम समझे थे क्या, निकला क्या। डिसइलुजन में दो-चार तो उठ कर चले गए। दो-चार उठना चाहे उनके पीछे, लेकिन कुछ संकोच, कुछ उसमें रुक गए। दो-चार इसलिए रुक गए कि यह पूछ लें, फिर जाएं, यह मामला क्या है? आदमी के साथ ऐसा व्यवहार करना पड़ता है। जब वह आदमी चला गया, तो उन्होंने पूछा कि हम बहुत दुखी हैं, आपकी बात सुन कर हमको बहुत पीड़ा हुई। आपने ऐसा दुर्व्यवहार किया। आपने उस आदमी को ऐसा धक्का दिया। इस तरह की बात कही। यह एक संत के लिए उपयोगी है?
उस फकीर ने कहा, इसके पहले कि मैं तुमको निकालूं। निकालूंगा मैं तुमको, तुम देख चुके हो। तुमको अभी निकालता हूं। लेकिन इससे पहले कि मैं तुमको निकालूं, मैं तुम्हें बता दूं कि बात क्या है। तुम्हें उदाहरण से समझा दूं। दो क्षण के लिए वह चुप हो गया।
खिड़की से एक पक्षी आया। और कमरे में चक्कर काटने लगा। और वह निकलना चाहता है और निकल नहीं पाता और आप जानते ही हैं कि पक्षी अगर कमरे में घुस जाए, तो खुले दरवाजे को छोड़ कर सब जगह रास्ता खोजता है।
दिमाग आदमियों में थोड़े ही ख़राब है, पक्षियों का भी ऐसा ही है। खुला दरवाजा है उसको छोड़ देगा, दीवाल पर चोंच मारेगा, पर फड़फड़ाएगा और जितना घबड़ाने लगेगा, निकलने का रास्ता नहीं पाएगा, उतना ही खुले दरवाजे के पास नहीं जाएगा और सब तरफ, और वह फकीर चुप बैठा है और वे सारे लोग देख रहे हैं कि बात क्या है।
वह फकीर पक्षी को देख रहा है। वह कई चक्कर लगा कर, उस खुले दरवाजे की पट्टी पर आकर बैठ गया। जैसे ही वह बैठा उस फकीर ने जोर से ताली बजाई। वह पक्षी फड़फड़ाया और दरवाजे के बाहर हो गया। उस फकीर ने कहाः देखो मित्रो, उस पक्षी को जब मैंने ताली बजाई, तो जरूर लगा होगा कि कौन दुष्ट आदमी है, मैं तो वैसे ही थका-मांदा बैठा हूं। और ताली बजा कर मुझे शॉक कर रहा है। लेकिन वही ताली उसे बाहर ले गई। अब वह खुले आकाश में है। लेकिन जो ताली समझ सकेंगे, वे खुले आकाश में चले जाएंगे। जो ताली नहीं समझ सकेंगे, वे अपने और चूहों के बिलों में घुस जाएंगे। दरवाजा बंद कर लेंगे कि अब इस आदमी के पास नहीं आना है। सब गड़बड़ हो गया।
जिनको आप शॉक समझ रहे हैं, आपके लिए परमात्मा से की गई मेरी प्रार्थना है। जिनको आप चोट समझते हैं, जिनसे आप क्रोधित हो जाते हैं, आपके लिए परमात्मा से किए गए मेरे निवेदन हैं।
जब आप खिड़की पर बैठे होते हैं, तब मैं जोर से ताली बजाता हूं कि शायद
उड़ जाएं, लेकिन वह पक्षी बड़ा समझदार था। इतने समझदार आदमी खोजने बहुत मुश्किल हैं, लेकिन इस आशा में कुछ नासमझ घूमते ही रहते हैं कि शायद इतने समझदार आदमी भी कहीं मिल जाएं। उसी की खोज में घूमता रहता हूं। कोई मिल जाए ठीक, नहीं मिला तो यह तो कहने को न होगा परमात्मा के सामने कि जब पक्षी बैठा था स्वतंत्र होने के करीब, तो मैंने ताली नहीं बजाई थी। मैंने ताली बजा दी थी, अब यह पक्षी की बात कि वह बाहर न गया हो और भीतर आ गया हो।

इन तीन दिनों में मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना उससे बहुत अनुगृहीत हूं। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।